संघर्ष

आधुनिक दलित समाज पर आधारित उपन्यास

अधिवक्ता अशोक कुमार

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Advocate Ashok Kumar 2025

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

For permissions requests or inquiries regarding this publication, please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7310-332-7

Cover design: Yash Singhal
Typesetting: Namrata Saini

First Edition: December 2025

अस्वीकरण (Disclaimer)

इस पुस्तक में वर्णित सभी पात्र, घटनाएँ, स्थान और संवाद पूर्णतः काल्पनिक हैं। यदि इनमें किसी वास्तविक व्यक्ति, समाज, समुदाय, धर्म, जाति, संस्था या स्थान से कोई समानता प्रतीत होती है तो वह मात्र संयोग है। इस पुस्तक का उद्देश्य किसी भी धर्म, जाति, समुदाय, व्यक्ति या विचारधारा की आलोचना या अपमान करना नहीं है, बल्कि समाज में व्याप्त असमानता, छुआछूत और भेदभाव के विरुद्ध मानवता, समानता और जागरूकता का संदेश देना है।

लेखक ने इस रचना में सामाजिक यथार्थ को साहित्यिक रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। अतः इसे किसी विशेष समूह या व्यक्ति पर टिप्पणी के रूप में न लिया जाए।

लेखक परिचय

एडवोकेट अशोक कुमार राजस्थान के छोटे से गाँव मणधर (भीनमाल, जिला जालोर) से हैं। वे पेशे से अधिवक्ता हैं और समाज की जमीनी सच्चाइयों को गहराई से समझते हैं। "संघर्ष" उनका पहला उपन्यास है, जो आधुनिक भारतीय समाज में व्याप्त जाति और वर्ण व्यवस्था के साथ-साथ अपने ही समाज के लोगों के भीतर पनपती जलन और टूटन को उजागर करता है। वे मानते हैं कि लेखन केवल शब्दों का माध्यम नहीं, बल्कि बदलाव की दिशा में उठाया गया सशक्त कदम है।

akparmar80033@gmail.com

https://instagram.com/adv.ashok_parmar

संघर्ष

एडवोकेट अशोक कुमार

राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर,

अपर जिला सेशन न्यायालय,

भीनमाल

समर्पण

यह पहली पुस्तक मेरे माता पिता जी को समर्पित, जिन्होंने मुझे जीवन ही नहीं सोचने समझने की दृष्टि भी दी। आज जो कुछ भी हूँ इनकी बदौलत से ही हूँ।

अनुक्रम

भाग 1. 1
भाग 2. 27
भाग 3 59
भाग 4. 87
भाग 5. 109
भाग 6. 121

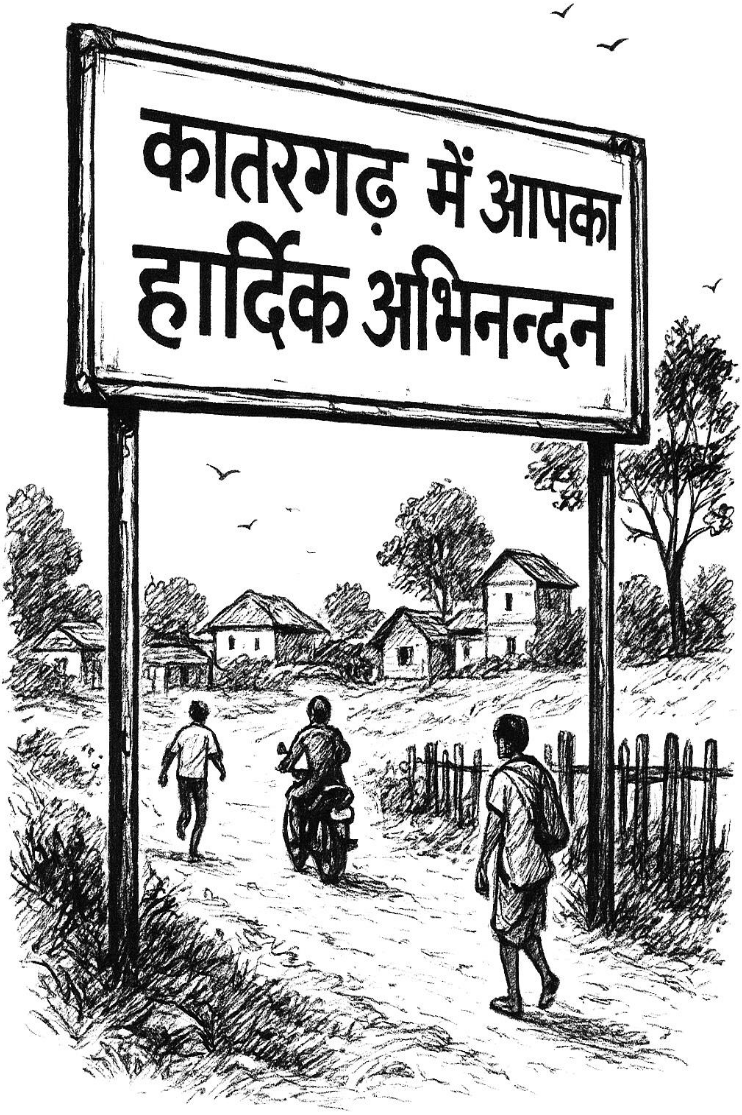
कातरगढ़ में आपका
हार्दिक अभिनन्दन

भाग 1.

1.

भारत में स्थित एक छोटा सा गांव जहां के दबंगों का नाम सुनते ही आस पड़ोस के गांवों में डर का माहौल बन जाता। इस गांव को कातरगढ़ नाम से जाना जाता हैं। गांव के बस स्टेशन पर लोहे की चादरों और जंग लगे खंभों से टंगा एक विशाल बोर्ड था, जिस पर काले अक्षरों में साफ लिखा था— 'कातरगढ़ में आपका हार्दिक अभिनंदन।' अजनबियों को यह शब्द पढ़कर लगता, मानो गांव के द्वार हर आने वाले के लिए खुले हों, जैसे यहां हर किसी का स्वागत स्नेह से किया जाता हो। परंतु सच्चाई इससे बिल्कुल उलट थी। यह अभिनंदन केवल उन लोगों के लिए था जो इस संसार में 'अपने' थे। बाहरी लोगों के लिए कातरगढ़ एक ऐसी निषिद्ध भूमि था, जहाँ धर्म, जात और परंपरा अदृश्य पहरेदार बनकर खड़े रहते। गांव के दक्षिणी छोर की तरफ एक जर्जर लकड़ी की बाड़ खड़ी थी, मानो समय की मार झेलते हुए भी अपनी आखिरी सांस तक पहरा देने को तत्पर हो। उस बाड़ के भीतर कदम रखने का अधिकार केवल उन्हीं को था जिन्हें गांव वाले 'अपना' कहते थे।

यह गांव सिर्फ नाम से गांव नहीं था, बल्कि जातियों में बंटा एक पुराना नक्शा था जहाँ पूर्व छोर पर पुरोहित रहते थे, दक्षिण में ब्राह्मण, और पश्चिम कोने में सिमटे थे वे जिन्हें 'नीच' कहकर पुकारा जाता था, दलित।

सूरज की पहली किरण भैरवकांत की हवेली की ऊंची मीनारों से फिसलती हुई दलितों के कच्चे पक्के मकानों तक पहुंचने में जैसे हिचकिचा रही थी। गांव के पेड़ पौधों पर चहचहाते पक्षियों की मधुर धुन एक नया सवेरा नहीं, बल्कि एक पुरानी व्यवस्था का दोहराव सुना रही थी। ग्रामवासी अपने-अपने काम पर निकल चुके थे। कोई बस पकड़ने भागा, तो कोई मोटरसाइकिल की चाबी घुमा शहर की ओर दौड़ पड़ा, तो कोई अब भी नंगे पांव खेतों की ओर बढ़ रहा था,

झोली में दो सूखी रोटियां और मन में दिनभर की मजदूरी की उम्मीद।

गांव के पूर्व दिशा में स्थित एक सरकारी उच्च माध्यमिक स्कूल जहां का हेडमास्टर धीरकांत था, जिसका स्वभाव और तौर तरीका सबसे अलग। लंबा कद, लंबी मूंछें, कठोर चेहरा जिनकी बनावट ही ऐसी थी, जिससे बच्चों से लेकर स्कूल के मास्टरों में एक अलग खौफ पैदा हो जाता था।

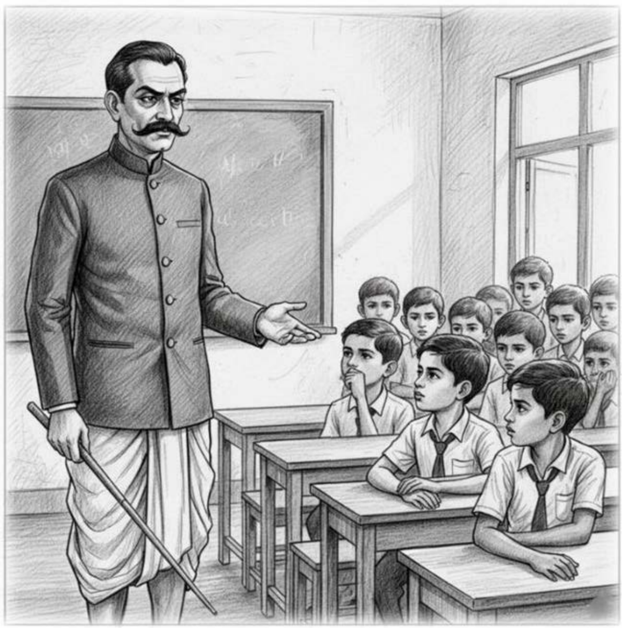

उनकी नजरों में जातिवाद का जहर घुला हुआ था। उच्च जात के बच्चे को आगे बिठाना, उन्हें अधिक अवसर देना दलित व पिछड़े वर्ग के बच्चों को अपमानित करना, पीछे बिठाना उनकी आंखों की रेखाओं में लिखा हुआ होता था।

अमन और नीरज सगे भाई थे—नीरज बड़ा, अमन छोटा। दादा जग्गू दादी गवरी के प्यारे पौते, दोनों एक ही क्लास में पढ़ते थे, पढ़ाई में तेज़ और सवालों में निडर। अमन और नीरज का रिश्ता गहरा और संतुलित था। नीरज जहां सोच-समझकर कदम उठाता, अमन वहीं झटपट और सीधे कार्रवाई में विश्वास करता। नीरज अक्सर अमन को संयम और धैर्य की सीख, साहस और चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में निर्णय लेने की प्रेरणा देता।

स्कूल के मैदान में सुबह की प्रार्थना ख़त्म हो चुकी थी। सभी बच्चे अपनी-अपनी कतारों में अंदर जा चुके थे, सिर्फ कुछ चेहरे पीछे रह गए थे, जिन्हें मास्टर धीरकांत की निगाहें भीतर तक पहचान चुकी थीं। अमन और उसका बड़ा भाई नीरज, दोनों एक ही कक्षा में थे। पढ़ाई में तेज़, सवालों में निडर, और किताबों में खोए रहने वाले। पर उनकी पहचान सिर्फ उनकी बुद्धि नहीं थी बल्कि वो चुपचाप चिपका हुआ शब्द था, जो स्कूल के रजिस्टर से लेकर गांव की गलियों तक हर किसी की जुबान पर अटकता रहता था, "नीच जात"।

कक्षा में भी कुछ अलग नहीं था। सरकारी स्कूल की पुरानी दीवारों के बीच काली स्लेट पर उजली चॉक से लिखते समय भी भेदभाव साफ झलकता था। मास्टर धीरकांत, जो खुद गांव कातरगढ़ के पुरोहित भैरवकांत की चरण रज से भरे रहते। दलित छात्रों को घृणा की दृष्टि से देखते।

"नीच जात के बालक पीछे जाओ।"

मास्टर धीरकांत की आवाज कड़की।

"जरा भी ऊधम मचाया तो स्कूल से निकाल दूंगा।"

अमन ने धीमे स्वर में भाई से पूछा —

"नीरज भईया, हमारे साथ ऐसा क्यों होता है? मास्टर हमें क्लास के पीछे क्यों बिठाते हैं? और हमारे साथ छुआछूत और भेदभाव का

खेल क्यों खेलते हैं? एक लड़का तो आज मुझे क्लास के बाहर 'नीच' कहकर पुकार रहा था। भईया, ये 'नीच' क्या होता है?"

नीरज ने थोड़ी देर चुप रहकर उसकी आंखों में देखा।

"अमन। देख, हम इनकी नजरों में छोटी जात के लोग हैं। धर्म एक है, पर जाति अनेक। हमें सबसे निम्न श्रेणी में बांटा गया है। 'नीच' कहकर पुकारना उनका धर्म बन गया है। और इस धर्म में जीना, हमारे लिए जैसे पाप हो गया है। पर अभी तू इतना इन बातों पर ध्यान मत दे। समय आएगा, जब हम इन्हें दिखाएंगे कि इंसान को जात से नहीं, काम से पहचाना जाता है।

स्कूल की घंटी बजते ही बच्चों ने किताब-कॉपी बैग में रखीं और बड़े गेट से बाहर निकलकर घर की ओर चल दिए। अमन और नीरज ने अपना झोला घर की कुंडी पर टांगा और खिलखिलाते हुए घर से निकल पड़े। दोनों भाई बचपन के उन दिनों में जी रहे थे, जहाँ जीवन के अर्थ समझने की बजाय, उसे महसूस किया जाता है, धूल में खेलकर, पेड़ों के पीछे भागकर, और छोटी-छोटी जिज्ञासाओं में बड़े-बड़े सवाल पूछकर। खेलते-खेलते दोनों गांव के बाहर निकल आए। चारों ओर फैला खुला आसमान और हरियाली उन्हें खींच रही थी।

"नीरज भईया देखो! वो जो पेड़ दिख रहा है दूर, कितना सुंदर लग रहा है। उसके फूल पीले-पीले लग रहे हैं जैसे किसी ने सोने की पंखुड़ियां टांगी हों चलो ना, चलते हैं वहाँ।" अमन की आँखें चमक उठीं।

नीरज ने थोड़ी देर उसकी आंखों में झांका, फिर आसमान की ओर देखा। "नहीं रे, दूर है वो, दादा को पता चला तो खैर नहीं हमारी। चल, अब घर चलते हैं।"

"पर भईया मुझे तो वहां जाना है।"

"तुझे डर नहीं लग रहा?" नीरज ने कहां।

"किस बात का, तुझे क्या लगता है मैं डर रहा हूं?" अमन ने मुस्कराते हुए पलटकर पूछा।

पर असल में नीरज को डर लग रहा था, पेड़ से नहीं, दुनिया से। उस दुनिया से जिसमें दो मासूम बच्चे भी अपनी आज़ादी को तय नहीं कर सकते, जिसमें फूलों के रंग से ज़्यादा ज़रूरी होता है उनका धर्म और जाति। नीरज को याद आया कि स्कूल में आज फिर मास्टर धीरकांत ने उन्हें क्लास के पीछे बैठाया था। सबके सामने डांटा भी, लेकिन उसी गलती के लिए जिसे सवर्ण बच्चों पर हंस कर टाल दिया गया था।

अमन के मन में वो सवाल आज भी गूंज रहा था —

"भईया, हमे क्लास के पीछे क्यों बिठाते हैं? मास्टर धीरकांत हमें ही क्यों घूरते हैं? और वो लड़का मुझे 'नीच' क्यों कहता है? ये 'नीच' क्या होता है, भईया?"

नीरज ने ठंडी सांस भरी, अपनी उम्र से बड़ा होने का बोझ कंधे पर महसूस किया और एक धीमी आवाज़ में बोला —

"देख अमन, हम इनकी नजरों में छोटी जात के लोग हैं। कहने को धर्म एक है पर जातियाँ अनेक। हमें 'नीच' कहना उनका धर्म है और इस धर्म में जीना, हमारे लिए पाप है।"

अमन की आँखें फैल गईं वो समझ तो नहीं पाया, पर शब्दों का भार उसके मन पर उतर गया।

नीरज ने उसका कंधा पकड़ते हुए कहा —

"पर तू अभी इन सब पर ध्यान मत दे, तू बस पढ़, आगे बढ़। अभी समय है, जब वक्त आएगा, ना सिर्फ जवाब देंगे, बल्कि इन्हें आइना भी दिखाएंगे कि इंसान जन्म से नहीं, कर्म से बड़ा होता है।"

अमन ने गहरी सांस ली और भाई की बातों को अपने मन के कोरे कागज पर लिख लिया, बिना कलम के, बिना स्याही के।

दोनों भाई उस पीले फूल वाले पेड़ की ओर नहीं गए, पर वो रास्ता जरूर पार कर लिया, जहाँ एक बच्चे ने पहली बार सवाल पूछे। वक्त के साथ अमन अब क्लास के केवल पन्ने नहीं पलट रहा था, बल्कि समाज की परतें भी पढ़ने लगा था। वो हर रोज़ अपने साथ हुए व्यवहार को अब केवल इत्तेफाक नहीं, बल्कि एक पैटर्न के रूप में देख रहा था। एक ऐसा बुनियादी ढांचा, जो जाति के कंकालों पर खड़ा था। बचपन में जो बातें बस "मास्टरजी का गुस्सा" लगती थीं, अब धीरे-धीरे समझ में आने लगी थीं।

स्कूल की दीवारें तो एक जैसी थीं, पर नज़रों का भेद साफ था।

पटकी में रखा पानी सबके लिए था लेकिन नहीं, "तुम्हारे लिए नहीं" ये शब्द हर रोज़ उसके कानों में किसी हथौड़े की तरह बजते।

उस दिन का किस्सा उसे ताउम्र याद रह गया।

"धीरकांत मास्टरजी" — माथे पर गाढ़ा तिलक, एक हाथ में छड़ी और दूसरे में भेदभाव का इतिहास थामे हुए। उन्होंने जैसे ही देखा कि अमन ने सामने रखे मटके से पानी पी लिया उनके चेहरे पर क्रोध की लहर दौड़ पड़ी।

"अरे..अरे! ये क्या किया रे चमार के छोरे! दिखता नहीं पटकी में रखा पानी तुम्हारे लिए नहीं है? हिम्मत कैसे हुई हाथ लगाने की? जानता नहीं मैं कौन हूं?"

धीरकांत की आंखों में जैसे आग थी, और वो आग किसी मासूम बच्चे पर नहीं, बल्कि उसकी जाति पर भड़की हुई थी। अमन चुप था, उसके हाथ कांप रहे थे। नीरज दौड़ता हुआ आया और अमन को पीछे खींच लिया।

"भाई, भईया", अमन की आंखें डबडबा गई थीं, लेकिन नीरज की आंखें अब धधक रही थीं।

"मास्टरजी! वो बच्चा है, नासमझ हैं, उसे क्या पता पटकी में रखा पानी अपर कास्ट के लिए हैं।"

"पता होना चाहिए! और तुझे भी!" मास्टर गरज उठे।

उस शाम घर लौटते वक्त अमन ने धीरे से पूछा —

"भाई, हम इतने अलग क्यों हैं? क्या हमारे खून में कुछ खराबी है? वो पटकी में रखा पानी हम क्यों नहीं पी सकते?"

नीरज ने धीरे से उसका कंधा थपथपाया और कहा —

"देख अमन, ये गांव नहीं, एक नक्शा है जातियों में बंटा हुआ।

हमारी बस्ती नक्शे के पश्चिम दिशा के कोने में बनी है, और उनकी हवेलियां नक्शे के बीचोंबीच। तू समझ रहा है ना? ये 'धर्म' नहीं, धांधली है।"

अमन के भीतर कुछ टूट रहा था, और कुछ बन भी रहा था।

उसने महसूस किया कि स्कूल, गांव, समाज सब एक जैसे हैं।

सब जगह भेदभाव की अदृश्य दीवारें खड़ी हैं। अब वो धीरे धीरे समझ रहा था।

2.

कहते हैं, हर सिक्के के दो पहलू होते हैं। जैसे कोई कठोर स्वभाव से जाना जाता है तो कोई अपनी नम्रता से। उसी सरकारी स्कूल में एक मास्टर थे भोलाशंकर। मध्यम कद, थोड़ा झुका हुआ शरीर, चेहरे पर आत्मविश्वास की आभा और होठों पर हल्की मुस्कान, यही

उनकी पहचान थी। पुरोहित जाति से होने के बावजूद उनमें जरा भी घमंड नहीं था। उनकी नजरों में सभी बच्चे समान थे, चाहे दलित और पिछड़े वर्ग के हों या फिर उच्च जाति कहलाने वाले। न कोई छोटा था, न कोई बड़ा हर छात्र को वे समान की दृष्टि से देखते थे। यही सहज और सरल स्वभाव उन्हें पूरे गांव और स्कूल में अलग बनाता था।

क्लास में दलित और पिछड़े वर्ग के बच्चों को हमेशा पीछे की बेंचों पर बैठा देखना भोलाशंकर को भीतर से खलता था। यह दृश्य उन्हें शोभा नहीं देता था, लेकिन हकीकत यह थी कि किस बच्चे को कहाँ बैठना है, यह सब मानो हेडमास्टर धीरकांत के माथे पर लिखा हुआ था। उसके सामने भोलाशंकर चाह कर भी कुछ नहीं कर पाते। फिर

भी, उनकी आंखों में एक गहरी आस्था थी। अमन और नीरज जैसे बच्चों को देखकर उन्हें लगता था कि यही वे नन्हें पौधे हैं, जो आगे चलकर दलितों के भविष्य की मजबूत नींव बनेंगे।

वर्जकांत, भैरवकांत का इकलौता पौता और मास्टर धीरकांत का प्रिय छात्र, निडर और साहसी, स्कूल को अपने पिता की जागीर समझता था। एक दिन उसने कुछ लड़कों के साथ अमन और नीरज को घेर लिया और उनसे भिड़ गया।

"अबे चमार, अपनी औकात में रहो! तुम्हारे जैसे लोग पढ़ने नहीं, खेतों में हल चलाने लायक हैं!"

अमन का खून खौल उठा पर जवाब देने से पहले नीरज ने सामने कदम रखा।

"तू क्या समझता है खुद को? तेरे बाप की जागीर है स्कूल?"

"जानता नहीं मैं कौन हूं? किसका बेटा हूं!"

नीरज एक पल को रुका, फिर सीधा उसकी आंखों में देखकर बोला — "तू होगा किसी का बेटा है और मैं, उस मिट्टी का, जिस पर तू पांव रखता है। हम दो हैं, पर जब बोलेंगे, तुम्हारी भीड़ की चुप्पी गूंज बन जाएगी। तू हमें नीच कहता है तो सुन, हम तेरी सोच से ऊंचे हैं।"

वर्जकांत चुप हो गया, मास्टर धीरकांत और भोलाशंकर सुन रहे थे, पर इस बार धीरकांत कुछ बोले नहीं। कक्षा में सन्नाटा था जैसे सत्य की पहली चिंगारी किसी सूखी घास पर गिर गई हो। स्कूल की लड़ाई की बात आग की तरह पूरे गांव में फैल गई थी। कुर्सी पर बैठा भैरवकांत आंगन में हुक्का गुड़गुड़ा रहा था। जब सेवक ने बात बताई तो हवेली की दीवारें तक उसके क्रोध की तपिश से थर्रा उठीं। मूंछों को ताव देते हुए उसने गुस्से से आंखें तरेरीं और पूछा।

"क्या कहा तुमने? मेरे लाडले पौते से किसी दलित के छोरे ने लड़ाई की? वो भी जुबान लड़ाई? हाथ उठाया उस पर?"

सेवक ने सिर झुकाकर कहा,

"जी हुकुम! मास्टर धीरकांत खुद बता रहे थे। क्लास में बहस हुई और उस दलित छोरे ने भैरवकांत के पोते को धक्का दे दिया।"

भैरवकांत की आंखों की नसें फड़कने लगीं। चेहरा क्रोध से तमतमा उठा।

"धक्के का जवाब जानता है, क्या होता है? कौन है वो दलित की औलाद? भूल गया अपनी हैसियत? उसी की मिट्टी में हमने खेतों में बैल जोते हैं, और अब उसी मिट्टी के लौंडे हमारे खानदान की रगों में उबाल ला रहे हैं?"

फिर एकदम गरजकर बोला —

"जाओ! बुलाकर लाओ उस हरामजादे के बाप को। उसके घर जाकर कहो — भैरवकांत ने बुलाया है। और हां, सिर झुका के लाना, वरना गांव के कायदे याद दिलाने में देर नहीं लगेगी।"

सेवक पिछड़े वर्ग का था। अधिकांश पिछड़े वर्ग के लोग दलित नहीं माने जाते और उन्हें शुद्र कहना उचित नहीं है। लेकिन सेवक पिछड़े वर्ग से होकर भी शुद्र था। तुम्हारे ऊपर बहुत बड़ा जुर्म हुआ है, शायद उन्होंने अपना इतिहास सही तरीके से नहीं पढ़ा। आज तुमने अपने आप को ब्राह्मणों और क्षत्रियों के समान, दलितों से ऊपर मान लिया है। फिर भी एक बात याद रखना उनकी दृष्टि में तुम शुद्र हो और रहोगे।

सेवक का आगे पीछे कोई नहीं था, वो अकेला अपने ढंग से जीवन जी रहा था। मालिक के अलावा उसका कोई सहारा नहीं था। उनका जीवन मानो अपने मालिक की सेवा में ही बंधा हुआ था। घर के छोटे-बड़े काम करना, खेत-खलिहान में हाथ बँटाना और हर आदेश का पालन करना, यही उसकी दिनचर्या थी। बदले में उसे बस दो वक्त की रोटी मिलती। तुरंत उसने भैरवकांत की आज्ञा मानी। भय से

उसकी टांगें कांप रही थीं, मानो जमीन ही उसके पैरों के नीचे से खिसक गई हो। गांव की टेढ़ी-मेढ़ी गलियों से गुज़रता हुआ वह जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाता पश्चिम दिशा की ओर मुड़ा, जहां दलित और आदिवासी लोग अपने झोपड़पट्टियों में रहते थे। बस्ती के चारों तरफ कच्चे मकान थे, किसी को भी पक्का मकान बनाने की इजाज़त नहीं थी।

अमन और नीरज के दादा - दादी का परिचय—

जग्गू एक साधारण मगर विशिष्ट व्यक्तित्व वाला व्यक्ति था। लंबा कद, लेकिन शरीर थोड़ा झुका हुआ मानो जीवन के बोझ और खेत-खलिहान की मेहनत ने समय के साथ उसकी पीठ को झुका दिया था। उसके चेहरे पर धूप-धूल से तपे हुए जीवन के निशान साफ झलकते थे। आँखों में हल्की थकान थी, पर उनमें सच्चाई और अपनापन हमेशा चमकता रहता। मतमैली धोती और पुरानी कमीज़ उसके रोज़मर्रा की पहचान थे। सिर पर बंधा हुआ साफा भले ही बार-बार धुला न हो, पर वह उसकी गरिमा और आत्मसम्मान का प्रतीक था। उसका स्वभाव सरल था, वह बोलता कम पर सुनता ज़्यादा था। गांव में लोग उसकी ईमानदारी और सीधेपन की मिसाल देते थे।

गवरी उसकी पत्नी थी। उन्हें गुलामी में जीना पसंद नहीं था वक्त ही ऐसा था जो उसे जीने को मजबूर कर रहा था। वह एक साधारण ग्रामीण महिला, जिसका जीवन सुबह से शाम तक घर-आँगन और खेतों के कामों में उलझा रहता। धूप में झुलसी हुई उसकी त्वचा, और चेहरे पर पसीने की चमक, उसकी मेहनत की गवाही देती थी। फटे-पुराने घाघरे और आँचल से ही उसने अपने सौंदर्य को ढँक रखा था, पर उसकी आँखों में गहरी ममता और धैर्य की चमक किसी भी आभूषण से कम न थी। उम्र ढलने के बावजूद भी अपने पौते अमन और नीरज का पालन पोषण हेतु गवरी दिनभर रसोई, चूल्हा-चौका, पशुओं की सेवा और खेतों में हाथ बँटाने में लगी रहती। उसका

जीवन सादगी और संघर्ष का संगम था, पर उसके मन की ताक़त उसे हर कठिनाई के आगे मज़बूत बनाए रखती थी।

सेवक ने जग्गू के घर के बाहर दरवाजे की कुंडी खटखटाई।

"कौन?" अंदर से आवाज आई।

"मैं भैरवकांत साहब के यहां से आया हूं।"

भीतर से कुछ पल सन्नाटा रहा, फिर आवाज आई —

"क्यों? क्या बात है?"

"आपका बुलावा है। मालिक ने कहा है, अभी आओ।"

जग्गू, उस वक्त अपने परिवार के साथ मिट्टी के चूल्हे के पास सूखी लकड़ियों में आग सुलगा रहा था, उठ खड़ा हुआ। चेहरे पर संशय और भय की लकीरें थीं। उसने बीवी की ओर देखा, जैसे उसकी आंखों से कह रहा हो, अब क्या होगा?

बच्चे चुप थे। माँ की आंखें नम थीं।

दादा कुछ देर चुप रहा। फिर भीतर जाकर गमछा कंधे पर डाला, और डरते हुए बोला — "चलो।"

हवेली की ओर जाते हुए हर कदम उसके मन में सैकड़ों सवालों के काँटे बो रहा था। उसके पिता भी कभी इसी हवेली के दरबार में खड़े रहे थे, कभी घास लाते हुए, कभी फसल का हिस्सा देते हुए। लेकिन आज वो किसी और वजह से जा रहा था। अपने पौते की गलती के लिए।

भैरवकांत! की हवेली में प्रवेश उसके लिए निषिद्ध था। लेकिन आज उसके पांव वहां तक पहुंचे।

सेवक ने जाकर भैरवकांत को बताया — "हाजिर है जग्गू।"

भैरवकांत बाहर निकला, आंखों में ज्वाला, मूंछों में ताव, और स्वर में घृणा।

"क्या रे जग्गू!" उसने गरजते हुए कहा। "तुझे उच्च नीच का भेद नहीं मालूम क्या? जानता है तू किससे बात कर रहा है?"

जग्गू सिर झुकाए खड़ा रहा।

"तेरे लड़के ने मेरे पोते पर हाथ उठाया है! जुबान लड़ाई की है! तेरे घर में तहजीब नहीं सिखाई जाती क्या?"

जग्गू कांपते हुए बोला —

"गलती हो गई हुकुम लड़के से, बच्चा है, माफ कर दीजिए आइंदा ऐसी गलती नहीं होगी।"

भैरवकांत ने अपनी छड़ी ज़मीन पर पटकी —

"ऐसी गलती? इसे तो हम भूल से भी नहीं भूलेंगे! याद रखना, तेरी औकात क्या है। अगर दोबारा ऐसा हुआ तो बेटा छोड़, तू खुद खेतों में नहीं दिखाई देगा।"

जग्गू कुछ कहता उससे पहले ही भैरवकांत मुड़ गया। सेवक ने इशारे से उसे लौट जाने को कहा।

घर लौटते वक्त जग्गू की चाल बोझिल थी। आंखें जमीन में गड़ी थीं। भीतर एक लाचारी थी, जो पीढ़ियों से विरासत में मिली थी। घर पहुंचते ही पत्नी गवरी ने दरवाजा खोला।

"क्या हुआ?" उसने पूछा।

लेकिन जवाब देने की हिम्मत जग्गू में नहीं थी।

उसी वक्त अमन और नीरज भीतर से निकले। अमन ने डरते हुए पूछा —

"दादाजी, भैरवकांत ने क्या कहा?"

उसकी आंखों में झिझक थी, डर था। शायद आत्मग्लानि भी थी।

जग्गू गुस्से में गरज पड़ा —

"तुम जानते नहीं, वो बड़े घर के लोग हैं। तुम्हारी औकात नहीं है उनसे लड़ने की!"

बच्चे सिहर गए।

मां गवरी बीच में आ गई। बच्चों को अपने पीछे खींचते हुए बोली —

"अरे! क्यों चिल्लाते हो उन पर? बच्चे हैं। गलती हो भी गई तो क्या? कब तक ऐसे ही डरते-डरते जीते रहोगे? डर-डर कर घुट-घुट कर कब तक जिएंगे?"

जग्गू कुछ पल स्तब्ध खड़ा रहा।

गवरी की आंखें अंगारे सी जल रही थीं।

"हर बार झुकते-झुकते रीढ़ ही गायब हो गई है तुम्हारी। बच्चे क्या सीखेंगे? यही कि दलित होना गुनाह है?"

कुछ पल के लिए घर के भीतर सन्नाटा पसर गया।

फिर गवरी ने अपनी बात पूरी की —

"एक दिन तो ये ज़माना बदलेगा, जग्गू एक दिन तो हमारी अगली पीढ़ी अपने हक़ के लिए लड़ेगी। तुम्हारे बेटे की हिम्मत ग़लती नहीं थी, साहस था। अब फैसला तुम्हें करना है, बेटे का साथ दोगे या भैरवकांत की गालियां सहेते रहोगे।"

3.

शाम ढलने को थी। सूरज की आखिरी किरणें पीपल के पत्तों से छनती हुई ज़मीन पर थकी हुई परछाइयों की तरह गिर रही थीं। गांव

के दलित बस्ती की तरफ़ एकमात्र पक्की सड़क पर जिसे सरपंच ने 'विकास' का नाम देकर शुरू तो किया था, पर अधूरी छोड़ दी थी। अमन, नीरज और बस्ती के कुछ लड़के पुराने साइकिल के पहिये को लकड़ी के छोटी डंडी से घुमाते हुए खेल रहे थे।

खेलते-खेलते थक कर सब वहीं पास में बने खपरैल वाले पुराने घर के अंदर चले आए — जहां बस्ती की सबसे बुज़ुर्ग महिला "गंगा दादी" चारपाई पर बैठी थीं।

दादी की आँखें धंसी हुई थीं, लेकिन उनमें अनुभव की गहराई थी। उनकी झुर्रियों में सदियों की पीड़ा दबे स्वर में पुकार रही थी। दादी ने अमन को देखा और जैसे किसी पहचाने हुए युग की छाया मिल गई हो।

"बैठ जा बेटा, आज तुझे वो सुनाऊं जो न किताबों में लिखा है, न नेताओं की बातों में दिखता है। वो जो हमारे खून में दर्ज है"

अमन, नीरज और बाकी लड़के दादी के पैरों के पास बैठ गए। गांव का सन्नाटा जैसे उनके चारों ओर चुपचाप खड़ा था।

"बेटा आज़ादी को बरस बीत गए, कहते हैं अब सब बराबर हैं, लेकिन तू खुद बता, क्या तुझे जागीरदार के बेटे के बराबर कुर्सी मिलती है स्कूल में?"

अमन ने गर्दन झुका ली। शब्द नहीं निकले, पर मौन चीख रहा था।

"जब मैं तेरे जितनी थी बेटा, ' गंगा दादी बोलीं,' हमारे लिए स्कूल तो दूर, कुएं तक जाना भी पाप था। मंदिर में जाना तो सोचना भी मना था। हमारे लोग अपने गले में मटकी बांधते थे, ताकि थूक ज़मीन पर न गिरे, और कमर में झाड़ू, ताकि उनके पैर जहां चलें, वहां की मिट्टी 'शुद्ध' रहे। बेटा, अंग्रेज़ आए थे, उन्होंने हमें इंसान समझा। हमें पढ़ाया, कानून दिया, कुछ अधिकार भी। लेकिन जब हमने पढ़ना

शुरू किया, जब हमने उठना शुरू किया, तभी जिनके हाथों में सदियों से डंडा था, उन्हें दर्द होने लगा।"

दादी का स्वर अब धीमा नहीं, गर्जना बन चुका था।

"बेटा, अंग्रेज़ों ने करीबन दो सौ साल राज किया, लेकिन उन्होंने कभी हमें जात के नाम पर नीचा नहीं दिखाया। उन्होंने किसी के गले में मटकी नहीं डाली, किसी की औरतों के कपड़े नहीं फाड़े, किसी के कानों में गरम शीशा नहीं डाला। उन्होंने हमें मेहतर, चमार, नीच, अधम नहीं कहा। ये सब तो हमारे खुद के धर्म ने किया। और बेटा, यही वो वर्ग है जिसने हमें तीन हजार साल तक कीचड़ में डुबोकर रखा। हमारे बच्चों को शिक्षा से वंचित रखा। हमारी बहनों को अपमानित किया। हमारे पुरुषों को सिर झुकाकर जीने पर मजबूर किया। उन्हें मल-मूत्र उठाने वाला बना दिया, और आज भी जब हम उठना चाहते हैं, तो कहते हैं देखो, ये तो अपने को बराबर समझने लगा।"

अमन की आंखें भर आई थीं। उसके भीतर कुछ सुलग रहा था जैसे सदियों की राख में कोई चिंगारी फड़फड़ा रही हो।

अमन फुसफुसाया, बोला। "अब तो कानून है ना?"

"हां बेटा, संविधान है बाबा साहेब ने दिया। उन्होंने कलम दी, किताब दी, हक़ दिया। लेकिन वो किताबें तब तक अधूरी हैं, जब तक समाज के दिल में बराबरी नहीं उतरती। अभी भी मंदिर की सीढ़ियां हमसे ऊंची हैं गांव के मंदिर में अगर कोई दलित लड़का पूजा करने चला जाए, तो आज भी मूर्ति धो दी जाती है। कहने को जात-पांत खत्म हो गई, पर दिलों में आज भी वो कंटीली बाड़ खड़ी है बहुत गहरी। अभी भी गांव के चौपाल पर हमारी बात कम और ताना ज़्यादा चलता है। बदलाव आया है बेटा पर बाहर। भीतर अभी भी बहुत ज़हर भरा है। और यही लड़ाई हमें लड़नी है। पर बेटा, ध्यान रहे ये लड़ाई तलवार से नहीं, विचार से जीतनी है। कानून से, शिक्षा से, हिम्मत से। जब तुम

अफसर बनोगे, वकील बनोगे, लेखक बनोगे तभी तो हम सच्चे आज़ाद कहलाएंगे।"

अमन ने दादी के कांपते हाथ थाम लिए। उस रात उसने कुछ नहीं कहा पर उसकी आंखों में एक प्रतिज्ञा, एक आग, एक स्वप्न सुलग रहा था।

4.

सुबह की नई किरणें आकाश के आंगन से उतरती हुई खिड़की की टूटी जाली से अंदर झाँकने लगी थीं। घर के कोने में रखे मिट्टी के चूल्हे के पास बैठी माँ गवरी अपनी ममता भरी आवाज़ में बच्चों को नींद से जगा रही थी –

"उठ जाओ अमन, नीरज, सूरज सिर पर चढ़ आया है। स्कूल नहीं जाना क्या? देखो, अगर तुम्हारे दादा आ गए और तुम अभी भी बिस्तर में मिले, तो समझ लेना फिर मैं भी कुछ नहीं कहूँगी।"

अमन और नीरज अधखुली आँखों से उठ बैठे। पर नींद से ज़्यादा उनके मन पर रात की यादें भारी थीं। कल मोहल्ले की बूढ़ी दादी ने जो बातें सुनाई थीं, वे अभी भी अमन के मन में घूम रही थीं—भेदभाव, ठुकराया गया सम्मान, और वो इतिहास जो केवल कहानियों में नहीं, उनकी हड्डियों में पल रहा था। अमन और नीरज जिन्हें दादा दादी कहकर पुकारते थे, वे बड़े स्नेह से बच्चों को पाल रहे थे। मगर उस प्यार के नीचे एक लंबा संघर्ष भी पल रहा था।

दोनों भाई दैनिक क्रियाओं से निवृत्त होकर गांव के इकलौते स्कूल की ओर चल पड़े। स्कूल दूर नहीं था, लेकिन वहां की दूरी जात-पांत की खाई से भी गहरी थी। अमन के मन में आशंका थी मास्टर आज कौन-सी नई जिल्लत देने वाले होंगे? जैसे ही वे स्कूल पहुँचे, मास्टर

ने भड़क कर पूछा, "आज फिर लेट क्यों हुए?" उन्हें अपमानित होना पड़ा। अमन चुप रहा। दोपहर के भोजन के समय उन्हें अन्य बच्चों से दूर, पेड़ की छाया के नीचे बैठा दिया गया। भूख भी वैसी ही थी, लेकिन स्वाद में नमक नहीं, बल्कि अपमान घुला था। शाम को घर लौट आए, दीपावली पर उनके दादाजी ने शहर से साइकिल खरीद कर लाई थी। यह उनके लिए किसी ख़जाने से कम न था पर यह साइकिल अमन की नहीं, नीरज की थी क्योंकि अमन अभी छोटा था उनके साईकिल फिट नहीं बैठती थीं।

शाम को अमन और नीरज, बुआ के घर जाने निकले। रास्ता पड़ोसी गांव से होकर गुजरता था। जैसे ही गांव की सीमा नज़दीक आई, नीरज ने साइकिल रोक दी।

"क्या हुआ भैया?" अमन ने पूछा।

नीरज ने धीमे स्वर में कहा, "दादा कह रहे थे, इस गांव के लोग हमारे गांव की तरह खतरनाक हैं। यहां बाहरी व्यक्ति, वो भी दलित, अगर साइकिल या मोटरसाइकिल पर बैठे हुए अंदर गया, तो यह उनका अपमान माना जाता है।"

अमन चुप रहा। नीरज साइकिल को हैंडल से पकड़कर पैदल चलने लगा, अमन उसके पीछे, साइकिल की सीट पर हाथ रखे। दोनों के कदम भारी थे, मानो हर कदम पर किसी अदृश्य दीवार से टकरा रहे हों।

गांव के बीचोबीच एक पुराना, जर्जर मकान दिखाई दिया। टूटी छतें, दीवारों पर उग आए पीपल के छोटे अंकुर, और वीरान आंगन।

नीरज ने धीरे से कहा, "देख रहा है अमन, ये वही मकान है। यहां पहले दलितों का परिवार रहता था। अत्याचार से तंग आकर एक दिन सब कुछ छोड़कर चले गए। अब ये घर खंडहर बन गया है।"

अमन ने नज़रे उठाकर उन कच्चे मकानों की ओर देखा। जैसे ही वह बड़ा होता जा रहा था, दुनिया का असली चेहरा और उस चेहरे की झुर्रियाँ अब साफ़ दिखने लगी थीं। उसे अब समझ आने लगा था कि जाति केवल शब्द नहीं, किसी का रास्ता, सवारी, स्कूल, गांव गली यहां तक कि उसका सपना तक तय कर देती है।

5.

गर्मियों की छुट्टियां अब खत्म होने को थीं। हवा में एक अजीब सी नमी थी, मानो धूप की तपिश भी अपनी थकान उतारने लगी हो। मास्टर धीरकांत और भोलाशंकर ने छुट्टियों में अमन, नीरज और बाकी बच्चों को जो गृहकार्य दिया था, उसे दोनों भाइयों ने पूरी मेहनत और लगन से पूरा कर लिया था। परंतु उनके मन में मास्टर धीरकांत की डांट अब भी गूंज रही थी। जातिवाद की दीवारें उनके बचपन के आंगन में इतनी ऊंची थीं कि वे चाहकर भी उनसे बाहर नहीं निकल पाते। नीरज कभी-कभी गुस्से से भर उठता, पर अमन अब तक उस भेदभाव की ठंडी आग को केवल महसूस ही कर पा रहा था। उनके दादा जग्गू और दलित बस्ती के बाकी लोग तो इन जंजीरों के साथ जीने की आदत डाल चुके थे, पर मां गवरी को यह बंधन मंजूर नहीं था। वह चाहती थी कि उसके बच्चे बड़े होकर इस अन्याय की दीवारों को तोड़ें और दलितों की आवाज बनें। गवरी रोज अपने बच्चों से कहती, "बेटा, यह आधुनिक जमाना है। हमारे महापुरुषों ने हमें कलम दी है, शिक्षा दी है—यह हमारी तलवार हैं, ताकत है। बाबा साहब ने हमें संविधान का कवच दिया है, ताकि हम अपने अधिकारों के लिए लड़ सकें। तुम दोनों पढ़ाई में मेहनत करो, यही तुम्हारा सबसे बड़ा बदला है।" उसकी आवाज में एक अटूट विश्वास था। "जब तक मैं जिंदा हूं, तुम्हारा साथ दूंगी। किसी भी ठोकर पर गिरने नहीं दूंगी," उसने मुस्कुराते हुए कहा।

उसी समय उसने दोनों भाइयों को देखा।

"अरे, तुम्हारे बाल कितने बढ़ गए हैं। बाजार जाकर बाल कटवा आओ। छुट्टियां खत्म हो रही हैं, अब स्कूल में ऐसे ही गए तो मास्टर धीरकांत का मजाक बन जाओगे।"

बस स्टैंड से होते हुए दोनों भाई शहर की ओर जाने वाली बस में चढ़ गए। बस की खिड़की से आती धूल भरी हवा उनके बालों से खेल रही थी। अमन अचानक बोला, "भैया, क्यों न हम गांव के नाई की दुकान पर ही बाल कटवा लें? तुम जानते हो, उनका बेटा हमारे स्कूल में पढ़ता है, उनके पिता जब कभी गांव में नजर आते तो मुझे देख मुस्कुराते हैं मैं उन्हें नमस्ते करता है। शायद पैसे भी कम लेवे।"

नीरज ने एक गहरी सांस ली।

"अमन, तू सही कहता है, लेकिन कुछ अजीब डर लगता है। दादा जी ने कहा था, गांव का नाई गांव के दबंग व्यक्तियों के डर से दलितों के बाल नहीं काटता। याद है, बचपन में जब दादा मुझे गांव में नाई की दुकान पर ले गए थे, तो उसने मना कर दिया था "हम ऊंची जात के बाल काटते हैं, तुम्हारे नहीं। अगर भैरवकांत को पता चल गया तो हमारी दुकान ही बंद हो जाएगी।"

अमन थोड़ी देर चुप रहा, फिर बोला—

"अरे भईया, छोड़ो न वो गांव की बात है। ये तो शहर है। यहां भेदभाव नहीं होता। चलो, एक बार कोशिश करके देखते हैं।"

दोनों गांव से शहर आने के बाद उस नाई की दुकान तक पहुंचे।

अमन ने मुस्कुराकर कहा, "नमस्ते अंकलजी, मैं अमन,पहचाना?"

नाई ने जैसे ही उनकी ओर देखा, उसके चेहरे का रंग बदल गया।

जो आदमी गांव में उन्हें देखकर मुस्कुराता था, आज जैसे ठंडी नजरों से पहचान गया था कि ये ' नीची जात' के बच्चे हैं।

"क्या काम है?" उसने कठोर स्वर में पूछा।

"बाल कटवाने थे," अमन ने हिचकिचाते हुए कहा।

"नहीं बेटा, यह संभव नहीं। तुम लोग जाओ।"

अभी अमन कुछ कह ही पाता कि उसी समय गांव के भैरवकांत और उनके दो साथी वहां आ गए।

भैरवकांत ने नाई से पूछा—

"कौन हैं ये बच्चे? क्यों बाल नहीं काट रहे?"

नाई डरते हुए बोला—

"हुकुम, ये हमारे ग्राम के दलित बच्चे हैं। आप तो जानते ही हैं, हम तो ऊंची जात के बाल ही काटते हैं। इनका बाल काटना हमारे धर्म और धंधे दोनों के खिलाफ है।"

भैरवकांत ने गर्व से मूंछों पर ताव दिया और कहा—

"शाबाश, यही तो हमारी मर्यादा है। अच्छा किया जो मना कर दिया।"

अमन और नीरज वहां खड़े थे। उनकी आंखें झुक चुकी थीं, चेहरों पर अपमान का बोझ था। बिना कुछ कहे दोनों चुपचाप वहां से निकल गए। बाजार में घूमते हुए उन्हें एक अजनबी सैलून मिला। वहां के नाई ने बिना कुछ पूछे, हंसकर उनके बाल काट दिए।

अमन ने कहा—

"देखा भईया, ये शहर है। यहां कोई जात नहीं पूछता।"

बाल कटवाकर दोनों भाई बाजार की चकाचौंध देख कर कुछ देर घूमते रहे। वहां बड़े-बड़े शो-रूम, मिठाई की दुकानें, और बच्चों के खिलौने चमक रहे थे। उनकी आंखों में जैसे एक नई दुनिया का सपना उतर रहा था। एक ऐसी दुनिया जहां कोई जात न पूछे, कोई भेदभाव न हो। बाल कटवाने के बाद अमन और नीरज दोनों ने

बाजार की गलियों की ओर कदम बढ़ा दिए। शाम ढल रही थी, लेकिन शहर की रौनक अभी भी आँखों को चकाचौंध कर रही थी। सड़क किनारे चमचमाती दुकानें, मीठी-मीठी खुशबू बिखेरती मिठाई की दुकानें, और बच्चों के खिलखिलाते चेहरे उन्हें किसी और दुनिया का हिस्सा लग रहे थे। अमन ने बड़े ध्यान से सड़क के किनारे लगे बड़े-बड़े पोस्टरों को देखा। कहीं डॉक्टर का विज्ञापन था, कहीं सरकारी तैयारी की कोचिंग क्लास का बोर्ड, तो कहीं चमचमाते मोबाइल शोरूम की रोशनी।

"भईया" अमन ने धीरे से कहा, "क्या कभी हम भी इस शहर का हिस्सा बन सकते हैं?"

नीरज ने मुस्कुराकर उसके कंधे पर हाथ रखा।

"क्यों नहीं? बाबा साहब ने कहा है शिक्षा ही सबसे बड़ा हथियार है। अगर पढ़ाई में मेहनत की, तो हमें कोई रोक नहीं सकता। एक दिन तुझे इसी बाजार में ऐसे लोग सलाम करेंगे, जैसे आज ये बड़े-बड़े साहबों को करते हैं।"

अमन ने गहरी सांस ली। उसके भीतर नाई की दुकान का अपमान अभी भी ताजा था।

"भईया, मैं चाहता हूं कि एक दिन ऐसा आए जब कोई हमसे हमारी जात न पूछे। मैं पढ़-लिखकर ऐसा आदमी बनूंगा, जो अपनी पहचान खुद गढ़े। लोग मुझे नाम से जानें, जात से नहीं।"

नीरज ने उसके सिर पर हल्की-सी चपत लगाई।

"तू बिलकुल सही सोच रहा है। पर कुछ अपवाद हैं अगर हम पढ़ लिख गए तो उनकी आंखों में खटकेगे। वक्त बदल गया पर लोगों के दिल में नफ़रत आज भी जिंदा है।"

बाजार की एक दुकान के सामने खड़े होकर अमन ने शीशे में खुद को देखा। उसकी आंखों में अब एक नई चमक थी। शहर की इस

चकाचौंध ने अमन के मन में एक बगावत जगा दी थी। उसे लगा कि गांव के उस कच्चे रास्ते से निकलने का एक ही तरीका है वो है शिक्षा और साहस। वह सोचने लगा, "हमारा जीवन क्यों इन छोटी गलियों और जागीरदारों के हुक्मों में फंसा रहे? अगर मैं पढ़-लिख गया, तो कोई हमें नीच नहीं कहेगा। हम अपने हक खुद मांगेंगे।"

शाम का सन्नाटा अब गांव की ओर लौटने वाली बस में उतर चुका था। बस की खिड़की से आते ठंडी हवा के झोंके में अमन ने महसूस किया जैसे उसका पुराना डर कहीं पीछे छूट रहा हो।

घर पहुंचकर दादी मां गवरी ने दोनों को देखा। उनके थके हुए चेहरों को पढ़ते हुए उसने पूछा—

"क्या हुआ बेटा, ऐसे क्यों चुप हो?"

अमन ने सिर मां की गोद में रख दिया।

"माँ, जब तक हम छोटे रहेंगे, ये लोग हमें नीचा दिखाते रहेंगे। पर मैं बड़ा होकर सबको दिखा दूंगा कि दलित होना गुनाह नहीं, बल्कि ताकत है।"

मां ने उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहा—

"सब ठीक होगा बेटा, हिम्मत बनाए रखना। एक दिन वो समय भी आयेगा सब तुम्हारा सपना साकार होगा।

धीरे-धीरे वक्त गुजरता गया। सोचने-समझने की क्षमता में निरंतर विस्तार होता रहा। समय का पता ही नहीं चला और पल कब बीत गए, कोई जान ही न पाया।

उच्च माध्यमिक विद्यालय कातरगढ़—जहाँ अमन और नीरज दोनों भाई पढ़ते थे—वहाँ कुछ महीने पहले ही विदाई समारोह संपन्न हो

चुका था। अब, आज, बारहवीं कक्षा के परिणाम घोषित होने के उपलक्ष्य में विद्यालय में बधाई समारोह का आयोजन किया गया।

अमन और नीरज ने अच्छे अंकों से परीक्षा उत्तीर्ण की थी। उनके परिवार में अपार खुशी का माहौल था और दोनों भाइयों को देखकर गाँव-गाँव में गर्व की लहर दौड़ गई थी। मगर दूसरी ओर, मास्टर धीरकांत के चेहरे पर असंतोष और खीझ साफ झलक रही थी। उसकी निगाहें बार-बार अमन और नीरज पर टिक रही थीं, मानो उसे यह सफलता अखर रही हो। उसके मन की पीड़ा का कारण था उसका प्रिय छात्र वर्जकांत, जो परीक्षा में असफल हो गया था।

वहीं, मास्टर भोलाशंकर की भावनाएँ मिश्रित थीं। उन्हें इस बात का दुख था कि वर्जकांत और कुछ अन्य छात्र असफल रहे, किंतु साथ ही यह संतोष भी था कि अमन और नीरज ने परिश्रम और लगन से बारहवीं कक्षा शानदार अंकों से उत्तीर्ण की।

*****

भाग 2.

1.

अमन और नीरज समय के साथ धीरे-धीरे बड़े होते गए। घर की आर्थिक स्थिति का बोझ उनके कंधों पर साफ़ महसूस होने लगा। पिता और मम्मा की निर्दलीय हत्या के बाद दादा जग्गू और दादी गवरी ही उनके जीवन का सहारा बने। वही बुजुर्ग हाथ, जिन्होंने उनकी उंगली पकड़कर चलना सिखाया था, अब अपने कांपते हाथों से उनके भविष्य की नाव को डूबने से बचाने की कोशिश कर रहे थे। घर में रोज चर्चा होने लगी कि अब आगे की पढ़ाई का खर्च कैसे उठाया जाए तभी नीरज ने घर की आर्थिक स्थिति को देखते हुए पढ़ाई छोड़ने का कठोर निर्णय लिया। वह जानता था कि दादा-दादी की कमर टूटी हुई आर्थिक स्थिति में एक साथ दो बच्चों की पढ़ाई असंभव थी।

बारहवीं कक्षा में नीरज और अमन ने अपने संघर्षों के बावजूद अच्छे अंक प्राप्त किए। गांव के लोग उसकी मेहनत की चर्चा करते थे। इस प्रकार, परिस्थितियों ने नीरज को समय से पहले ही बड़ा बना दिया। अपने छोटे भाई की आंखों में भविष्य का उजाला देख रहा था, जबकि अपने सपनों को उसने फिलहाल जीवन की अलमारी में बंद कर दिया था। जब सरकारी कॉलेज की पहली सूची निकली, तो अमन का नाम सबसे ऊपर देखकर दादा-दादी की आंखों में बरसों बाद गर्व के आंसू चमक उठे।

गांव की वह सुबह बाकी दिनों से अलग थी। आकाश में हल्की धूप थी और मिट्टी में रात की नमी अभी भी महसूस हो रही थी। आज दादा जग्गू ने दोनों भाइयों को आंगन में बुलाया। सामने मिट्टी की पुरानी चौकी पर दादी गवरी बैठी थीं। उसने पॉकेट से कुछ पैसे निकाल अमन की हथेली में रख दिए।"अमन बेटा, आज तू जोधपुर शहर जा रहा है, एक दिन तुम हमारे गांव का नाम रोशन करोगे,

जातिवाद की जड़ को उखाड़ कर समाज को एक नया आयाम दोगे। ये तेरे कुछ महीनों का खर्चा है, दादी ने मुस्कराते हुए कहा।"

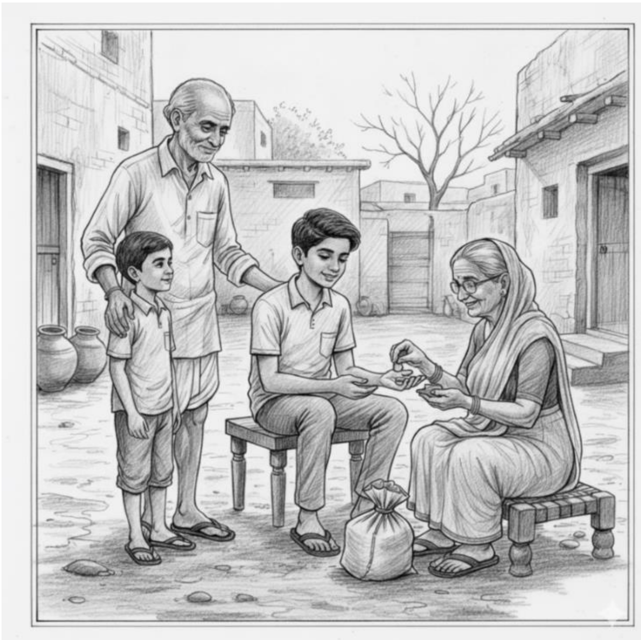

अमन ने पैसे लिए और अपने पॉकेट में डाल दिए। उसके चेहरे पर उत्साह और डर दोनों झलक रहे थे। शहर के कॉलेज का नाम उसने कई बार सुना था, लेकिन अब वही उसका नया संसार बनने जा रहा था। दादा - दादी का आर्शीवाद लेकर शहर जाने को रवाना हुआ।

नीरज ने अपने छोटे भाई का बैग कंधे पर रखा और कहा—

"चल, भाई! तुझे शहर ले चलता हूँ। अब तेरा समय शुरू हुआ।"

लेकिन उसके भीतर का खालीपन किसी ने नहीं देखा। जिस राह पर आज अमन निकल रहा था, वही रास्ता नीरज का भी सपना था, पर

आर्थिक तंगी को देखते हुए उसने हालात के आगे अपने अरमानों को चुप करा दिया था।

बस में बैठा अमन खिड़की से बाहर देख रहा था। रास्ते में खेत, पेड़, और गांव की मिट्टी धीरे-धीरे पीछे छूटती जा रही थी। सामने शहर की चमक-दमक थी, जो उसके लिए नई और अजनबी थी।

शहर की बस में बैठते ही अमन की आंखों में नई दुनिया के रंग चमकने लगे। सड़कें चौड़ी थीं, चारों तरफ़ ऊँची-ऊँची इमारतें। सरकारी कॉलेज का लाल पत्थर का भवन सामने दिखाई दिया। कॉलेज के गेट पर पहुँचते ही भीड़ का शोर और नए चेहरे उसे घबराहट दिला रहे थे। लड़कियाँ हँसती-खिलखिलाती हुईं, लड़के नए कपड़ों में आत्मविश्वास से भरे हुए।

नीरज ने उसके कंधे पर हाथ रखकर कहा—

"डर मत छोटे भाई! देख यह है तुम्हारी कॉलेज जो तुम्हारा भविष्य तय करेगी। तू मेहनत करते रहना बाकी चिंता छोड़।"

कॉलेज में एडमिशन की प्रक्रिया पूरी होने के बाद, नीरज वापस गांव लौट चला। बस की खिड़की से शहर का नज़ारा दूर होता जा रहा था और आंखों में एक ही सवाल घूम रहा था कि एक दिन मेरा भाई बहुत बड़ा आदमी बनेगा? वह जानता था कि अब उसका जीवन खेती, मेहनत-मजदूरी और परिवार की जिम्मेदारी में गुजरने वाला है।

2.

अगले दिन सुबह, अमन ने पहली बार शहर में, रूम से कॉलेज की ओर अकेले कदम बढ़ाए। दादा-दादी का आशीर्वाद और नीरज भईया का साथ सदैव उनके साथ था, उनकी यादें अब भी जहन में

थी। अमन अपने गांव की सिली हुई नीली कमीज़ और पुराने जूतों में खुद को एकदम अलग महसूस कर रहा था।

कक्षा के बाहर भीड़ लगी हुई थी। कक्षा का नाम लेकर एक एक को अंदर बुलाया जा रहा था। एक लड़के ने अमन को उनका परिचय पूछा, अमन ने हिम्मत जुटाकर अपना नाम बताया - अमन प्रीत सिंह। क्लास में बैठते ही उसके आसपास से फुसफुसाहटें सुनाई देने लगीं—

"ये नया लड़का गांव से लगता है। नाम से राजपूत लगता हैं जरा पूछना कि तुम्हारी जाति क्या है?"

अमन ने किसी से नज़रें नहीं मिलाईं। उसने अपनी किताबें खोल लीं और खिड़की की तरफ़ देखने लगा। इसी बीच विधु नाम का एक लंबा-सा लड़का, जो दिखने में आत्मविश्वासी लेकिन बदमाश प्रवृत्ति का उसके पास आया। उसने हंसते हुए कहा—

"अरे भाई, नया एडमिशन है क्या? नाम क्या है?"

"अमन प्रीत सिंह।"

"राजपूत हो क्या?"

"नहीं तो?"

"कौनसी बिरादरी से हो?"

"मतलब!"

"मेरा मतलब जात क्या है तुम्हारी?"

अमन के भीतर जैसे कुछ टूट गया। यह वही भारत था, जो खुद को 'विश्व गुरु' कहता है, पर पहचान अब भी भारतीय, इंसानियत यहां फिर धर्म से नहीं, जात से बनती है। उसने सिर उठाकर गर्व से कहा—

"दलित हूँ!"

"ओह! चमार हो?"

विधु, हल्की मुस्कान के साथ कक्षा से बाहर निकलते हुए मध्यम आवाज़ में कहां -

"लो एक और देहाती आ गया।"

कुछ बदमाश प्रवृत्ति के लड़के गौर से देख रहे थे, ऐसे देख रहे थे जैसे कोई धरती पर विचित्र प्राणी उतरा हो। देख देखकर हंस रहे थे, उसमें कुछ लड़कियां भी थी जो मजाक का पात्र समझ हँसी जा रही थी।

अमन सब सुन रहा था पर कुछ नहीं बोला। उसके भीतर कुछ टूट-सा गया। शहर का माहौल उसके लिए नया था, लेकिन यह पहली बार था जब शहर में दलित शब्द और अपने गांव और सादगी के लिए चुभती हुई हंसी का सामना करना पड़ा।

दोपहर की क्लास ख़त्म होने के बाद अमन अकेला-सा कैंपस में टहल रहा था। चारों ओर फैले पेड़ों की छाँव, बेंचों पर बैठे झुंड, और मैदान में फैली हल्की धूप शहर का यह कॉलेज उसके लिए किसी और ही दुनिया जैसा था। वह कभी एक पेड़ के नीचे रुक जाता, कभी नोटिस बोर्ड पढ़ने लगता, मानो खुद को इस भीड़ में ढूँढने की कोशिश कर रहा हो। तभी एक लड़की किताबें हाथ में लिए उसके पास से गुज़री। हवा में उसके बाल लहराए और उसकी मुस्कान कुछ पल के लिए अमन की आंखों में ठहर गई। यह उसकी कॉलेज की पहली मुलाकात थी रीना से, वह लड़की जो आगे चलकर उसके जीवन की कहानी में एक नया मोड़ लाने वाली थी।

अमन अपने ख्यालों में न जाने कहां खो गया था कि तभी सामने से संदीप आता दिखा। गोरा रंग, साफ़-सुथरे कपड़े और चेहरे पर आत्मविश्वास भरी मुस्कान—उसके हावभाव से साफ़ झलक रहा था।

"अरे भाई! कैसे है?" उसने हाथ बढ़ाते हुए पूछा।

"अच्छा हूँ।"

"वैसे तुम्हारा नाम क्या है?"

"अमन प्रीत सिंह।"

"मैं संदीप सिंह," उसने दोस्ताना अंदाज़ में हाथ मिलाया। " इस शहर पहली बार आए हो क्या?"

अमन ने हल्की मुस्कान दी और सिर हिलाया। संदीप ने उसकी झिझक को भांप लिया। कुछ पल की चुप्पी के बाद उसने कहा—

"यार, आज क्लास में जो हुआ, अच्छा नहीं हुआ। मुझे बुरा लगा। लोग यहाँ यूँ ही हँसते हैं, लेकिन मेरा मानना कि ये सही नहीं है। गांव ही नहीं शहरों में भी रग रग में जातिवाद का जहर घुला हुआ है, हम सब इंसान है एक ही मिट्टी से बने हैं तो फिर हमे बांटा क्यों गया। अगर नफरत करनी ही है तो शराब पीने वाले से करो, मांस खाने वाले से करो, उन गंदी आदतों से करो जो इंसान की आत्मा को मैला करती हैं।"

अमन की आँखें भर आईं, पर उसने अपनी भावनाओं को दबाते हुए कहा—

"मै यहीं सोचता हूं कि हम भी तो इंसान है तो फिर यह भेदभाव, अत्याचार क्यों?"

संदीप ने उसके कंधे पर हाथ रखा, "देखो अमन, यह दुनिया जिनके कही रंग है। मै तुम्हारे साथ हूँ। उठो लड़ो अपने समाज को जगाओं एक नहीं दिशा दो। आगे जाकर उनका भविष्य तय करो। कॉलेज में लोग कपड़ों और जात से आंकते हैं, लेकिन असली पहचान मेहनत और हिम्मत से बनती है। तुम्हें बस खुद पर भरोसा रखना होगा।"

अमन ने पहली बार किसी को अपने पक्ष में महसूस किया। मन में एक हल्की-सी राहत आई कि इस अजनबी भीड़ में कम-से-कम एक दोस्त तो मिला।

संदीप ने हंसते हुए कहा—

"चलो, चाय पीने चलते हैं। यहां की चाय तुम्हारी सारी टेंशन गायब कर देगी।"

दोनों कैंपस की पगडंडी पर धीरे-धीरे साथ-साथ चल पड़े। रास्ते के दोनों ओर खड़े नीम और बाकी के पेड़ों की डालियों से छनकर आती हल्की हवा मानो उनके बोझिल मन को सहला रही थी। अमन, जो अब तक शहर की आपाधापी और पढ़ाई के दबाव से दबा हुआ महसूस कर रहा था, अचानक उस ठंडी हवा में अपने कंधों से कुछ भार उतरता हुआ महसूस करने लगा। आसमान में बादलों का धुंधलका था और सूरज की किरणें पेड़ों की पत्तियों से छनकर जमीन पर छोटे-छोटे धब्बे बना रही थीं।

कॉलेज के मुख्य द्वार से बाहर निकलते ही सामने वही पुरानी चाय की टपरी दिखाई दी छोटा-सा लकड़ी का बना स्टोल, जिसके ऊपर टीन की छत लगी थी। वहीं से आती उबलती चाय की महक पूरे वातावरण को अपने आगोश में ले रही थी। चाय वाले के हाथ में पीतल का चमकता हुआ पतीला था, जिसमें उबलती चाय की धारा लहरों की तरह उठती-गिरती जा रही थी। अदरक और इलायची की सुगंध मानो हवा के साथ घुलकर आसपास खड़े सभी छात्रों तक पहुँच रही थी।

टपरी के बाहर लकड़ी की बेंचों पर कई लड़के-लड़कियां बैठे हुए थे। कोई जोर-जोर से हँस रहा था, तो कोई अपने दोस्तों के साथ चाय की चुस्कियों के बीच भविष्य की योजनाओं पर चर्चा कर रहा था। कुल्हड़ में भरी चाय की भाप उड़ते ही उसके साथ मिट्टी की सोंधी खुशबू वातावरण में घुल जाती। कुल्हड़ को होंठों से लगाते ही हर

छात्र के चेहरे पर जैसे सुकून उतर आता। चारों ओर हंसी-ठिठोली, ठहाकों और हल्की गुनगुनाहट से माहौल पूरी तरह गर्मजोशी से भर उठा था।

अमन और संदीप भी टपरी पर आकर बैठ गए। अमन ने चाय वाला कुल्हड़ थामते ही उसकी गर्माहट अपनी हथेलियों में महसूस की। उसने लंबी-लंबी चुस्कियां भरना शुरू किया, मानो हर चुस्की उसके भीतर जमी थकान को धो रही हो। कुल्हड़ की मिट्टी की खुशबू और चाय का स्वाद उसे उसकी जड़ों, उसके गांव की याद दिला रहे थे। उसकी आँखें हल्की बंद हो गईं, और उसने महसूस किया कि यह साधारण-सी चाय उसकी आत्मा तक को निचोड़ रही है।

संदीप हँसते हुए बोला—"देखा, अमन भाई! शहर की सबसे सस्ती और सबसे असली चीज़ यही कुल्हड़ वाली चाय है। यहाँ ना तो दिखावा है और ना ही नकलीपन।"

अमन मुस्कुराया, चाय की चुस्की के साथ भीतर गहराई तक उतरते सुकून को महसूस करते हुए। आसपास के शोरगुल और ठहाकों के बीच भी वह एक अद्‌भुत शांति में डूबा हुआ था।

3.

कॉलेज का पहला सप्ताह अमन के लिए थोड़ा अजनबी सा था। क्लासरूम की दीवारें, जिन पर बड़े-बड़े नेताओं और विद्वानों की तस्वीरें लगी थीं, उसे हमेशा अपने गांव के पुराने स्कूल की याद दिलातीं। वहां की मिट्टी में खेला हुआ यह लड़का अब शहर के चमकदार गलियारों में अपने आप को महसूस कर रहा था। समय के साथ संदीप और इब्राहिम उनके दोस्त बन जाते हैं। इब्राहिम इस्लाम धर्म से ताल्लुक रखने वाला, नेक दिल, हंसमुख स्वभाव संघर्ष का साथी लेकिन अचल में जाति नहीं धर्म के आधार पर भेदभाव करता है।

दूसरे सप्ताह की सुबह, जब अमन लाइब्रेरी से किताबें लेकर निकल रहा होता है, तभी सामने से आती रीना दिखती हैं। हल्का गुलाबी ड्रेस पहने, हवा से खेलते घुंघराले बाल और हाथ में कुछ नोटबुक्स। अमन के कदम अनजाने ही धीमे हो जाते है और वह दूसरी दिशा में मुड़ जाता हैं।

"अमन!" (पीछे से आवाज आई)

मुड़कर देखा, वैसे उन्हें मालूम था कौन हो सकता हैं। उदासी मुस्कुराहट में बदल गई। दोनों पहली बार एक दूसरे के करीब आए।

रीना ने मुस्कराते हुए कहा—

"अमन, कैसे हो?"

"अच्छा हूँ, तुम बताओ?" अमन ने कहां।

"मैं भी ठीक हूँ। जब पहली बार तुम्हें क्लास में देखा था, कुछ छात्र छात्राएं तुम पर हँस रहे थे, मुझे बुरा लगा।

अमन ने संकोच से सिर हिलाया।

"हां" सही कहां।"

धीरे-धीरे उनकी बातें बढ़ती गई। एक दूसरे के करीब आते गए, अमन का डर अंदर से खत्म हो चुका था। क्लास तो कभी लाइब्रेरी के बाहर फूलों से लदे पेड़ो के नीचे और कभी-कभी कॉलेज के कैंटीन की पुरानी लकड़ी की बेंच पर उनकी मुलाकाते दोस्ती में बदल चुकी थीं। अमन की तरह रीना पढ़ाई में तेज़ थी और अमन उसकी मदद नोट्स बनाने में करता। अमन को महसूस हो चुका था शहर में सभी चेहरे एक जैसे नहीं होते।

एक दिन क्लास में अजीब सा शोर था। प्रोफेसर नहीं आए थे, तो सभी स्टूडेंट्स अपनी-अपनी टोलियों में बातें कर रहे थे। माहौल किसी हाट-बाज़ार जैसा लग रहा था। कहीं ठहाके, कहीं सीटियों की आवाज़, तो कहीं धीमी-धीमी गपशप।

क्लास के बीचोबीच एक ग्रुप बैठा था। उस ग्रुप का अगुआ था,विधु। विधु शहर के एक संपन्न परिवार से ताल्लुक रखता था। उसके साथ जो लड़के थे, सब अमीर घरानों से आए हुए। बाईक पर आते, चमकदार ब्रांडेड कपड़े पहनते और अपने अंदाज़ से ऐसा जताते मानो पूरी क्लास उनके इशारों पर चल रही हो। उनकी बातचीत, उनकी हंसी-ठिठोली और उनकी ऊँची आवाज़ बाकी सबके लिए अक्सर परेशानी का सबब बन जाती थी। अमन, रीना और संदीप क्लास के पिछले कोने में अपनी जगह लिए बैठे थे। तभी विधु की नज़र उन पर पड़ी। उसने शरारती अंदाज़ में अपने साथियों को इशारा किया और ऊँची आवाज़ में बोला—

"अरे देखो-देखो ये रहा हमारा आरक्षणधारी मेहमान। गाँव से आया है और अब क्लास में अपनी सीट जमा ली है। दूर रहो चमार का छोरा है ये!"

इतना सुनते ही उसके बाकी दोस्त ठहाके मारकर हँसने लगे। उनकी हंसी क्लासरूम की दीवारों से टकराकर और भी तेज़ गूंज उठी।

विधु ने रीना और संदीप की ओर देखकर और तीखा तंज कसा

"तुम्हें शर्म नहीं आती? एक चमार के साथ बैठते हो! वाह संदीप, वाह रीना। लगता है गाँव वाला लड़का तो जल्दी ही शहर एडजस्ट कर गया। अब तो साथ में मैडम भी हैं!"

उसके शब्दों के साथ ही फिर से जोरदार ठहाके फूट पड़े।

अमन के चेहरे पर शर्म और गुस्से का मिला-जुला भाव उभर आया। उसका दिल जैसे कसक गया हो। वह कुछ कहना चाहता था, मगर शब्द गले में अटक गए।

इतने में रीना ने धीरे से कहा—

"इनकी बातों पर ध्यान मत दो अमन। ये लोग हमेशा ऐसे ही करते हैं। तुम शांत रहो।"

संदीप ने भी सहमति में सिर हिलाया। फिर मुस्कुराकर बोला—

"अच्छा ही हुआ कि आज इब्राहिम क्लास में नहीं है। वरना थप्पड़ जड़ देता।

4.

एक दिन रीना और अमन कॉलेज से घर लौट रहे थे। दोनों की दोस्ती पिछले कुछ महीनों में गहरी हो गई थी।

अमन पढ़ाई में तेज और व्यवहार में नम्र था, जबकि रीना खुले विचारों वाली और निडर स्वभाव की लड़की थी। यही वजह थी कि दोनों का साथ सबको अच्छा नहीं लगता था, खासकर विधु को। विधु कॉलेज

का बदमाश माना जाता था। ताकतवर, दबंग और जाति के घमंड से भरा हुआ। अमन की बढ़ती लोकप्रियता और रीना का उससे दोस्ताना रिश्ता विधु को खटकने लगा।

विधु अपने दोस्तों से कहने लगा—

"देख रहे हो? ये छोरा जो हमारी जात के सामने झुकना चाहिए, वो रीना के साथ घूमता है! नीच जात का है और फिर भी अकड़ देखो। आज इसका घमंड तोड़ता हूँ।"

उसने तय कर लिया कि अमन की जिंदगी मुश्किल बना देगा।

उस दिन विधु ने रीना के पिता को फोन लगाया।

"नमस्ते अंकल, मैं विधु बोल रहा हूँ, रीना के क्लास से।

अंकल, मैं ये सब आपकी इज्जत के लिए कह रहा हूँ। रीना कॉलेज में एक दलित छोरे के साथ घूमती है साथ खाना, साथ उठना-बैठना लोग बातें बना रहे हैं। आपको पता होना चाहिए।"

रीना के पिता ये सुनते ही भड़क उठे। पुराने ख्यालात के व्यक्ति होने के कारण उनकी नसों में जाति का घमंड दौड़ने लगा।

शाम को जब रीना घर लौटी, पिता का चेहरा तमतमाया हुआ था।

"कहाँ थी तू? किसके साथ घूम रही थी?"

रीना कुछ कहती, उससे पहले ही गाल पर जोरदार थप्पड़ पड़ा।

"तेरी हिम्मत कैसे हुई उस नीच जात के छोरे के साथ आंख मिलाने की? तू जानती भी है हम कौन हैं? हमारी इज्जत मिट्टी में मिलाकर रख दी तूने। मैं उस छोरे को छोड़ूँगा नहीं।"

रीना की आंखों में आंसू आ गए, लेकिन उसने हिम्मत नहीं हारी।

"पापा, जो आप सोच रहे हैं वो गलत है। वो मेरे अच्छे दोस्त हैं। और हां सिर्फ इसलिए बुरा लग रहा है क्योंकि वो दलित है, है न?"

यह सुनकर पिता और भड़क गए।

"चुप! तेरी जुबान बहुत चलने लगी है। कल ही कॉलेज जाता हूँ, उसका हिसाब करता हूँ।"

अगले दिन कॉलेज कैंपस में गुस्से से लाल रीना के पिता पहुंच गए।

"कहाँ है वो छोरा? सामने आ! तेरी औकात दिखा दूंगा।" रीना के पिता जी ने चिल्लाते हुए कहां।

छात्र जमा हो गए। तभी विधु और उसके गुर्गे भी वहां खड़े होकर तमाशा देखने लगे, चेहरे पर मुस्कान के साथ।

अमन सामने आया। उसकी आंखों में डर नहीं, लेकिन बेचैनी थी।

"अंकल, आपने मुझे बुलाया?"

इससे पहले कि अमन कुछ समझ पाता, रीना के पिता ने एक जोरदार थप्पड़ उसके गाल पर जड़ दिया। पिता गुस्से में थे।

"तेरी हिम्मत कैसे हुई मेरी बेटी से दोस्ती करने की?"

भीड़ सन्न रह गई। अमन संभलता, तभी रीना दौड़ती, रोती हुई बीच में आ गई।

"पापा, प्लीज़! आप गलत कर रहे हो। अमन गलत इंसान नहीं है।"

पिता ने गुस्से में कांपते हुए कहां—

"चुप! तू भी अब मेरी बेटी कहलाने लायक नहीं रही।"

"पापा, आपको सिर्फ इसलिए गुस्सा है क्योंकि वो दलित है, है न? यही वजह है!"

भीड़ में खड़े विधु के चेहरे पर मुस्कान फैल गई। यही तो वह चाहता था—अमन की बेइज्जती।

कॉलेज स्टाफ ने किसी तरह मामला शांत किया। रीना को पिता खींचकर घर ले गए।

उस दिन के बाद रीना कॉलेज में नहीं दिखी। एक हफ्ता फिर दूसरा हफ्ता गुजर गया। रीना का फोन बंद आने लगे।

पता चला रीना को पिता ने घर में कैद कर लिया है।

अमन टूट चुका था। क्लास में चुपचाप बैठता, लाइब्रेरी में किताबों में सिर गाड़े रहता। लेकिन मन में तूफान था।

इब्राहिम और संदीप उसके पास आए। उन्हें सांत्वना और हिम्मत देने लगे।

संदीप ने कहां—

"भाई, टेंशन मत ले। जो होगा देखा जाएगा। हम तेरे साथ हैं।"

इब्राहिम ने कहां —

"हां अमन भाई! संदीप भाई ठीक कह रहा है हम तुम्हारे साथ हैं, तू हिम्मत मत हार, ऐसे हालात हमेशा नहीं रहते।"

दोनों अमन को हंसाने की कोशिश करते, पर उसकी आंखों में जो दर्द था, वो किसी से नहीं छुप रहा था।

रीना को गए हुए एक महीना हो चुका था। कॉलेज के गलियारे, जहां उसकी हंसी गूंजती थी, अब खाली-खाली लगते थे। अमन रोज उसकी याद में डूबा रहता। हर दिन क्लास खत्म होते ही मोबाइल उठाकर कॉल करता, लेकिन फोन स्विच्ड ऑफ आता।

कितनी बार अमन ने संदीप और इब्राहिम से कहा—

"यार, कोई खबर मिले तो बताना। पता नहीं कैसी होगी ठीक होगी भी या नहीं।"

संदीप भी बेबस था।

संदीप ने कहां —

"भाई, उसके घर जाकर देख तो नहीं सकते। उसके बाप की अकड़ तू जानता है। हमें कहीं पिटवा न दे।"

अमन सिर झुकाकर चुप हो जाता। उसके चेहरे पर उम्मीद की लौ हर दिन थोड़ी-थोड़ी बुझ रही थी।

ठीक एक महीने बाद कॉलेज में सबकुछ सामान्य था। अमन अपनी सीट पर बैठा था, नोटबुक खोले हुए, लेकिन दिमाग कहीं और भटक रहा था। तभी क्लास के दरवाजे पर एक साया दिखी रीना थी। अमन की सांस रुक सी गई। उसने झटके से सिर उठाया। रीना वही थी, पर चेहरा मुरझाया हुआ, आंखों में गहरी थकान। उसने पहले जैसी मुस्कान नहीं दी। चुपचाप अपनी जगह पर आकर बैठ गई।

अमन उठकर उसके पास गया।

अमन—

"रीना! तू ठीक है? कहां थी तू इतने दिन?"

रीना ने उसकी आंखों में देखा, फिर नजरें झुका लीं। होंठ कांप रहे थे, आवाज भर्रा रही थी।

रीना ने कहां —

"अमन, पापा नहीं रहे।"

अमन के पैरों तले जमीन खिसक गई।

"क्या? ये तू क्या कह रही है?"

रीना की आंखों से आंसू बह निकले।

"कुछ दिन पहले उनका एक्सीडेंट हो गया। बहुत कोशिश हुई पर वो बच नहीं पाए।" रीना ने रोते हुए कहां।

पूरी क्लास में सन्नाटा छा गया। आस-पास खड़े सभी दोस्त चुप हो गए। संदीप और इब्राहिम के चेहरे पर भी गहरी उदासी थी।

अमन को यकीन ही नहीं हो रहा था। जिस इंसान ने कुछ दिन पहले उसके गाल पर थप्पड़ जड़ा था, जो गुस्से में खौल रहा था, वो अब इस दुनिया में नहीं है।

उसके मन में अजीब सी उलझन थी, दुख, हैरानी और थोड़ी राहत का अघोषित मिश्रण।

"रीना मुझे बहुत अफसोस है।"

रीना ने कोई जवाब नहीं दिया, बस सिर झुका लिया। उसकी आंखों से आंसू टप-टप गिरने लगे। अमन चुपचाप उसके बगल में बैठ गया।

संदीप ने माहौल को संभालने की कोशिश की।

संदीप ने धीरे स्वर में कहां —

"यार, ये वक्त बहुत मुश्किल है। हमें रीना को मजबूत बनाना होगा।"

इब्राहिम ने भी सिर हिलाया।

इब्राहिम ने कहां—

"अमन, तू भी हिम्मत रख। अब हालात बदल गए हैं।"

रीना ने आखिरकार धीमे स्वर में कहा—

"अमन, पापा के जाने के बाद सब बदल गया है। घर का माहौल, रिश्तेदारों के चेहरे, सब अजनबी लगते हैं। मुझे नहीं पता अब आगे क्या होगा।"

अमन ने उसकी ओर देखा और पहली बार महसूस किया। यह कहानी अब एक नए मोड़ पर थी।

5.

कॉलेज का लंच ब्रेक चल रहा था। कैंपस के बीचोंबीच एक पेड़ की छांव में अमन, संदीप और इब्राहिम बैठे बात कर रहे थे। तभी विधु अपने तीन-चार दोस्तों के साथ वहां आया। चेहरे पर वही घमंड, आंखों में वही जातिगत की आग।

विधु ने ताने मारते हुए कहां —

"अरे, देखो तो सही! दलितों का लीडर आज भी क्लास का हीरो बना बैठा है। क्या बात है अमन, बहुत इज्जत मिल रही है आजकल?"

अमन ने नजर उठाई, पर कुछ नहीं कहा। फिर किताब में सिर झुकाए सब कुछ सहन कर रहा था। लेकिन विधु वहीं रुक गया।

"चुप क्यों है रे? बोल न! या फिर किताबों में घुसकर हमें अपना नौकर समझने लगा है?"

अब अमन से रहा नहीं गया। उसने धीरे-धीरे किताब बंद की और खड़ा हो गया।

"विधु, ज्यादा मत उछल। चुप था क्योंकि तुझसे बहस करना मुझे जरूरी नहीं लगा।"

"ओहो! देखो देखो, बात करने का ढंग देखो। लगता है इस कॉलेज को अपने बाप की जागीर समझ रहा है तू।" विधु ने कहां।

अमन ने गुस्से से कदम आगे बढ़ाया।

"मेरे बाप की जागीर? सुन विधु! मैं चुप था इसलिए तू आसमान चढ़ गया। लेकिन कान खोलकर सुन भले ही इन हाथों ने खाल उतारना छोड़ दिया हो, पर वक्त आने पर खाल का जवाब इन जूतों से देना हम भूले नहीं हैं।"

विधु का चेहरा लाल हो गया। उसके दोस्त भी उकसाने लगे—

"मार दे साले को! बहुत उड़ रहा है।"

विधु ने गुस्से में अमन का कॉलर पकड़ कर कहां —

"तेरी औकात दिखाता हूँ अभी।"

अमन ने भी कॉलर झटककर उसे जोर से धक्का दिया।

"औकात मत सिखा मुझे, विधु। तू जाति के नाम पर अकड़ दिखाता है न? आज तेरी यही अकड़ तोडूंगा।"

दोनों में धक्का-मुक्की शुरू हो गई। भीड़ जमा हो गई। कैंपस में हंगामा मच गया।

इब्राहिम दौड़ता हुआ बीच में आया।

"बस करो दोनों! ये कॉलेज है, कुश्ती का अखाड़ा नहीं। अमन, विधु, हाथ छोड़ो!"

लेकिन दोनों के गुस्से पर किसी का बस नहीं था। अमन ने विधु को पीछे धकेला, विधु ने अमन को मुक्का मारने की कोशिश की। तभी रीना भीड़ चीरते हुए आई। उसका चेहरा गुस्से से लाल था, आवाज़ गूंज उठी—

"बस करो अमन! और तू विधु, चुपचाप पीछे हट जा। ये क्या तमाशा लगा रखा है?"

विधु ने रीना की तरफ देखा और मुस्कराया।

"ओहो! देखो, दलितों का पक्ष लेने वाली देवी आ गई। तू ही बचा सकती है अब अपने हीरो को।"

रीना ने उसे घूरा।

"विधु, एक कदम और बढ़ा अमन की तरफ तो सबके सामने तेरी अकड़ तोड़ दूंगी। समझा?"

विधु भौंचक्का रह गया। उसके दोस्त भी चुप हो गए।

इब्राहिम ने मौका देखकर दोनों को अलग किया।

"चलो क्लास में। बात यहीं खत्म करो वरना प्रिंसिपल के ऑफिस में सबकी छुट्टी हो जाएगी।" संदीप ने कहां।

अमन गुस्से में वहां से चला गया, लेकिन उसके दिल में आग भड़क रही थी। विधु ने भी जाते-जाते आंखों से बदला लेने का इशारा किया।

उस दिन के बाद कैंपस में हलचल मच गई। हर कोई इसी झगड़े की चर्चा कर रहा था।

संदीप ने अमन से कहा—

"भाई, संभलकर रहना। ये विधु चुप बैठने वाला नहीं है।"

अमन ने नजर उठाई और धीमे स्वर में कहा—

"मुझे परवाह नहीं। अब मैं चुप नहीं रहने वाला। जिस दिन जरूरत पड़ी, उसे बता दूंगा कि इंसान की पहचान उसकी जात से नहीं, उसके कर्म से होती है।"

रीना ने उसकी तरफ देखा, आंखों में चिंता और डर दोनों थे।

रीना ने धीरे से कहां —

"अमन, खुद को मुसीबत में मत डालो। छोड़ो जाने दो।"

अमन ने उसकी आंखों में देखा, लेकिन कुछ नहीं कहा। बस मन ही मन कसम खाई, अब किसी के आगे झुकना नहीं।

6.

क्लास खत्म हो चुकी थी। अमन, संदीप, इब्राहिम और रीना कैंपस में पेड़ के नीचे बैठे थे। चारों चुपचाप लंच कर रहे थे, तभी संदीप ने माहौल हल्का करने के लिए बात छेड़ी।

संदीप ने मुस्कुराते हुए कहा—

"अरे यार, कल से गणेशोत्सव शुरू हो रहा है। सोच रहा था, आज शाम मंदिर चलते हैं। सब मिलकर आरती करेंगे।"

यह सुनते ही अमन के चेहरे का रंग बदल गया। उसने थाली में रखा आखिरी कौर भी छोड़ दिया और धीमे मगर तीखे स्वर में बोला—

"संदीप, मैं मंदिर नहीं जाऊंगा।"

संदीप ने हैरानी से उसकी तरफ देखा।

"क्यों? तू तो हमेशा बोलता है पूजा-पाठ से तुझे कोई दिक्कत नहीं। फिर आज क्या हुआ?"

अमन ने गहरी सांस ली और नजरें संदीप पर गड़ा दीं।

"क्योंकि आज तक भगवान ने हमें कुछ नहीं दिया। हमारे समाज को कुछ नहीं मिला, ना भगवान से, ना इन देवी-देवताओं से।

हमारे हिस्से आया है तो अपमान और जो हमें दिया, वो सिर्फ बाबा साहब ने दिया। संविधान, हक, इज्जत।"

रीना और इब्राहिम चुपचाप उसकी बात सुन रहे थे। संदीप ने फिर कोशिश की।

"अरे यार, ऐसा क्यों सोचता है? भगवान सबका होता है।"

अमन के चेहरे पर कड़वी हंसी तैर गई।

"सबका होता है? सच में?

तुझे पता है संदीप, आज भी गांवों में हमारे लोग मंदिर की चौखट तक नहीं जा सकते। दलित अगर मंदिर में घुस जाए तो घंटों तक गंगाजल से शुद्धिकरण होता है। कुत्ता मंदिर में घुस जाए तो पूजा कर लेते हैं, लेकिन अगर मैं चला जाऊं तो हो सकता है यहां पर भी हंगामा मच जाए। क्या दलित कुत्ते से भी गया-गुजरा है?"

संदीप चुप हो गया। उसके पास कोई जवाब नहीं था।

अमन ने आगे कहा—

"मैं मंदिर क्यों जाऊँ? जहाँ आज भी मेरे समाज को अपमानित किया जाता है, वहाँ जाकर माथा क्यों टेकूँ? मैं तो कहता हूँ, एक भी शूद्र को मंदिर नहीं जाना चाहिए। जाए तो जाए क्यों, भगवान को क्या शुद्र क्या ब्राह्मण। सोचो, क्या हमारी इतनी भी सोच नहीं कि हम समझ सके क्या गलत, क्या सही?

रीना ने उसकी आंखों में देखा। उसका स्वर धीमा लेकिन दृढ़ था—

"अमन सही कह रहा है। अगर संविधान नहीं होता तो आज मैं भी यहां तुम्हारे साथ बैठकर पढ़ नहीं रही होती। हमें भूलना नहीं चाहिए कि बदलाव किसी भगवान ने नहीं, कानून ने दिया है।"

अमन ने उसकी तरफ देखा।

"रीना, यही फर्क है आज भी मेरे समाज को ये समझ नहीं आया कि इज्जत किताबों में है, मूर्तियों में नहीं।"

इतनी देर से चुप बैठे इब्राहिम ने गहरी सांस ली। उसके चेहरे पर उलझन साफ थी।

इब्राहिम धीरे से—

"तुम दोनों की बातें गलत नहीं हैं। लेकिन यार मैं भी अपने धर्म से बंधा हूं। मेरे लिए भी बहुत कुछ आसान नहीं है।"

अमन ने उसकी तरफ देखा और हल्की मुस्कान दी।

"भाई, तेरा दर्द मैं समझ सकता हूं। धर्म का बोझ सिर्फ तुम्हारे कंधों पर नहीं, इस पूरे देश पर है। फर्क इतना है कि हम उसे ढोते-ढोते टूट रहे हैं।"

चारों कुछ देर खामोश बैठे रहे। नीम की छांव में हवा भी जैसे भारी हो गई थी। अमन के शब्द अब भी गूंज रहे थे—

"मैं मंदिर नहीं जाऊंगा, तब तक नहीं, जब तक मेरे समाज को बराबरी का हक नहीं दिया जाता।"

7.

पतझड़ का मौसम अपने पूरे स्वरूप में था—सड़क के किनारे लगे ऊँचे-ऊँचे पेड़ लाल, पीले, नारंगी और सुनहरे पत्तों से लदे हुए थे। अमन और रीना फुटपाथ पर धीरे-धीरे चल रहे थे। उनके कदमों की हल्की आवाज़ और नीचे फुटपाथ पर गिरते पत्तों की सरसराहट एक अलग ही संगीत पैदा कर रही थी।

सड़क के किनारे लगे हेलोजन लाइट्स की पीली रोशनी पत्तों पर पड़कर उन्हें सुनहरी लकीरों में बदल रही थी। हवा में उड़ते पत्तों की आवाज़, लाइट की रोशनी में झिलमिलाता रंग, और दोनों के बीच की हल्की-सी हँसी, सब मिलकर एक जादुई माहौल पैदा कर रहे थी। अमन ने कभी रीना की ओर देखा, कभी आसमान में झूमते पत्तों को, और कभी उन पत्तों की छाया को जो उनके पैरों के नीचे से गुजर रही थी।

रीना ने हल्की आह भरते हुए कहा— "देखो ना अमन, ये पत्ते जैसे हमारे कदमों की कहानी बुन रहे हैं।"

अमन मुस्कुराया और बोला— "और लगता है जैसे पूरा मौसम हमारे साथ खेल रहा है, हर पत्ता, हर हवा का झोंका, हर रोशनी का टुकड़ा।"

उन्होंने एक-दूसरे की ओर देखा और फिर चुपचाप आगे बढ़ते रहे।

सड़क के किनारे की बेंचों पर बैठे लोग, कुछ दूर से गुजरती साइकिलें, हल्की सी आवाज़ें सब कुछ इतने धीमे थे कि अमन और रीना की छोटी-छोटी हरकतें, उनकी नर्मी, उनकी मुस्कान, और उनकी बातचीत और भी गहरी लग रही थी। हवा की ठंडक उनके

गालों को छू रही थी, और कभी-कभी झोंके में पत्ते उनके कंधों और सिरों पर गिरते। अमन ने रीना के हाथ को अपने हाथ में और मजबूती से थाम लिया। थोड़ी देर बाद, दोनों ने सड़क के किनारे लगे एक छोटे से पार्क में कदम रखा। वहाँ घास पर गिरते पत्तों का अलग ही अंदाज था। अमन और रीना ने अपनी जूते उतारकर धीरे-धीरे उस पत्तों के गाद पर कदम रखा। हर कदम के साथ पत्तों की सरसराहट, उनकी मुस्कान और हँसी के बीच गूँज रही थी। रीना ने अचानक एक बड़े लाल पत्ते को उठाया और अमन की नाक पर हल्के से छू दिया। अमन ने उस पत्ते को देखकर हँसी रोकते हुए कहा— "पतझड़ ने भी हमें चिढ़ाने की ठानी है।" रीना हँसी में झूम गई।

चंद्रमा की रोशनी पेड़ों के बीच से झांक रही थीं और हल्की रोशनी उनकी झुलसती परछाइयाँ बनाकर फर्श पर गिरा रही थीं। पत्तों की गिरती हुई लकीरें उनके चारों ओर घूमती हुई, उनके कदमों की लय में नाच रही थीं। अमन और रीना ने पल भर के लिए हाथ छोड़कर आसमान की ओर देखा—सुनहरी रोशनी, लाल पत्तों की छाया, और हवा में उड़ते पत्तों की हल्की सरसराहट, सब कुछ मिलकर उस पल को और भी जीवंत बना रही थी। वे फिर से एक-दूसरे के हाथों में हाथ डाल कर चल पड़े। हवा के झोंके ने उनके बालों को उड़ा दिया, और अमन ने धीरे से रीना के बालों को ठीक किया। उनके बीच शब्द कम, और भाव ज्यादा थे। पतझड़ का मौसम, गिरते पत्तों की मधुर ध्वनि, ठंडी हवा, हल्की रोशनी सब कुछ इस अहसास को और गहरा बना रहा था।

अमन ने रीना की ओर देखा और धीरे से कहा— "शायद यही सही समय है, जब हर पत्ता, हर हवा का झोंका, और हर रोशनी का टुकड़ा हमें जोड़ रहा है।" रीना ने सिर हिलाया और अपने चेहरे को उसके कंधे पर टिकाया। पतझड़ का यह मौसम केवल पेड़ों का नहीं था; यह उनके बीच की मधुरता, उनके रिश्ते की नर्मी, और उनके प्यार की पहली झलक का साक्षी बन गया था। सारा शहर, सड़कें, रोशनी,

हवा, और पत्तों की गिरती लहरें सब कुछ उनके चारों ओर जैसे एक संगीत की तरह बह रहा था, और वे दोनों उस संगीत के राग में खोए हुए थे। पतझड़ की यह शाम उनके जीवन में हमेशा के लिए एक यादगार पल बन गई।

फुटपाथ पर चलते हुए, रीना अचानक रुक गई। उसकी आँखें सीधे अमन की ओर थीं, और चेहरे पर एक अनकही चिंता का भाव। "तुम मुझे कभी छोड़ तो नहीं दोगे?" उसकी आवाज़ कंपकंपा रही थी, जैसे कोई छोटा डर उसके भीतर गहराता जा रहा हो। "मुझे डर लग रहा है, मेरा मन घबरा रहा है। अगर तुम्हें कुछ हो गया तो।"

अमन ने उसकी आँखों में देखा, हाथों में अपने हाथ रखे। उसकी आवाज़ स्थिर और गरिमामय थी, पर भीतर से धड़कते दिल की हल्की गूँज सुनाई दे रही थी।

"मुझे कुछ नहीं होगा। चिंता मत करो। कोई भी हमारा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता।"

रीना ने उसकी बातों को दोहराया, जैसे किसी मंत्र को अपने भीतर उतार रही हो। उसकी आँखों में आँसू थे, पर मुस्कान भी थी।

"अमन, तुम तो जानते हो, मैं तुम्हारे लिए कुछ भी कर सकती हूँ। तुम्हें कोई चोट नहीं पहुँचने दूँगी। चाहे दुनिया कुछ भी कहे, चाहे कोई भी हमें रोकने की कोशिश करे मैं तुम्हारे साथ हूँ।"

अमन ने धीरे से कहा— तुम जानती हो, मैं दलित मां का बेटा हूँ। समाज, परिवार, जात-पात सब कुछ मेरे खिलाफ हो सकता है, पर तुम्हारा साथ वो मेरी ताकत है। तुम मेरे लिए वो सब हो, जो दुनिया कभी नहीं समझ सकती।"

8.

कॉलेज का कैंपस दोपहर के बाद की हल्की धूप में सुनहरी आभा बिखेर रहा था। पेड़ के नीचे लगी लंबी लोहे की बेंच पर अमन और रीना बैठे हुए थे। रीना अपनी किताबों में खोई हुई थी, और अमन मुस्कुराते हुए किसी नए विषय पर चर्चा कर रहा था। तभी दूर से संदीप हांफता हुआ भागते-भागते आया। उसके चेहरे पर भय और घबराहट साफ झलक रही थी।

संदीप ने हाँफते हुए कहा—

"अमन... अमन! तुमसे जरूरी बात करनी है। अभी-अभी खबर मिली है कि इब्राहीम का सड़क हादसा हो गया है। बाईक से गिरकर बुरी तरह घायल हो गया है। वो इस शहर के बड़े हॉस्पिटल में भर्ती है।"

अमन पहले तो चुप रह गया। उसकी आँखों में अविश्वास था। उसने संदीप के कंधों को पकड़कर हिलाते हुए कहा—

"क्या कह रहे हो तुम? दिमाग तो ठीक है? अभी कुछ देर पहले तो वो मेरे पास था, वो तो हंस रहा था, मजाक कर रहा था।"

संदीप की आँखों में आँसू तैर रहे थे। उसने टूटे स्वर में कहा—

"नहीं अमन मैं सच कह रहा हूँ। अभी चलो मेरे साथ। वक्त बहुत कम है।"

अमन घबराकर खड़ा हुआ। रीना ने काँपती आवाज़ में कहा—

"अमन क्या हुआ? कहाँ जा रहे हो?"

अमन ने उसकी तरफ देखते हुए जल्दी से जवाब दिया—

"रीना, तुम यही रुको इब्राहीम का एक्सीडेंट हुआ है। मैं और संदीप हॉस्पिटल जा रहे हैं। दुआ करना।"

संदीप ने अपनी बाइक स्टार्ट की। दोनों हवा से बातें करते हुए सड़क पर दौड़े। हॉर्न की आवाज़, लोगों की भीड़ और हॉस्पिटल का गेट सब कुछ धुंधला सा लग रहा था।

हॉस्पिटल के इमरजेंसी वार्ड में दाखिल होते ही अमन का दिल जोर-जोर से धड़कने लगा। स्ट्रेचर पर खून से लथपथ इब्राहीम पड़ा था। उसकी साँसें भारी थीं, होंठ सूख चुके थे, और आँखें अर्धचेतन अवस्था में झपक रही थीं।

अमन दौड़कर उसके पास पहुँचा और फूट पड़ा—

"इब्राहीम भाई! ये क्या किया तूने? इतनी जल्दी क्या थी? क्यों तेज चलाता है बाईक? देख, हम सब तेरे साथ हैं... तुझे कुछ नहीं होगा। उठ, कुछ बोल।"

इब्राहीम की दाई हथेली हल्की सी कांपी। होंठ बुदबुदाए, पर आवाज़ बाहर नहीं निकली।

अमन ने डॉक्टर की तरफ देखा और लगभग चीखते हुए कहा—

"डॉक्टर! कुछ कीजिए, इसे बचाइए।"

डॉक्टर ने गंभीर स्वर में कहा—

"खून बहुत बह चुका है। स्थिति नाज़ुक है। जीने की संभावना बहुत कम है। हमें तुरंत रेफर करना होगा। लेकिन अभी खून की जरूरत है।"

अमन ने बिना एक पल सोचे कहा—

"मेरा खून ले लो। अभी टेस्ट करो। मैं जानता हूँ, मेरा और इब्राहीम का ब्लड ग्रुप एक ही है। जल्दी कीजिए।"

नर्स और स्टाफ तुरंत हरकत में आए। कुछ देर बाद अमन के खून की थैली इब्राहीम की नसों में चढ़ाई जा रही थी। अमन वहीं बैठा अपनी आँखें बंद करके प्रार्थना कर रहा था।

उसी बीच इब्राहीम के माँ-बाबूजी वार्ड में पहुँचे। माँ अपने बेटे को देखकर चीख पड़ी—

"मेरे लाल ये क्या हो गया तुझे? तेरी तो अभी उम्र ही क्या थी? छोड़कर मत जा मुझे।"

बाबूजी की आँखों से आँसू बह रहे थे। उन्होंने अमन और संदीप के कंधों को पकड़ते हुए कहा—

"बचाओ मेरे बेटे को तुम लोग उसके साथी हो ना? उसे वापस ला दो।"

संदीप रोते हुए उन्हें सांत्वना देता रहा—

"चाचा, चाची हिम्मत रखिए। डॉक्टर पूरा प्रयास कर रहे हैं। सब ठीक होगा।"

डॉक्टर ने कुछ देर बाद गंभीर चेहरा बनाते हुए कहा—

"हम इन्हें दिल्ली के एम्स हॉस्पिटल रेफर कर रहे हैं। वहाँ बेहतर इलाज हो पाएगा।"

एंबुलेंस मंगाई गई। सब दौड़ते-भागते स्ट्रेचर उठाकर बाहर लाने लगे। अमन का दिल बैठा जा रहा था। पर किस्मत शायद कोई और फैसला कर चुकी थी। रास्ते में, एंबुलेंस के भीतर अचानक इब्राहीम की साँसें अटकने लगीं। मशीनें तेज आवाज़ करने लगीं। डॉक्टर ने तुरंत सीपीआर दिया, इंजेक्शन लगाए, पर सब बेअसर रहा।

कुछ ही पलों में डॉक्टर ने गहरी साँस लेकर कहा—

"आई एम सॉरी हम इन्हें खो चुके हैं।"

सन्नाटा छा गया। सबकी साँसें रुक गईं। अमन की आँखें चौड़ी रह गईं। उसने चिल्लाकर कहा—

"नहीं! ये झूठ है! इब्राहीम तू हमे ऐसे छोड़कर नहीं जा सकता उठ, कुछ बोल देख, मैंने तुझे अपना खून दिया है, तू नहीं जा सकता।"

संदीप रो रहा था, चाचा चाची रोते हुए चिल्ला रहे थे। रीना को जब फोन पर खबर दी गई, तो उसके हाथ से मोबाइल गिर गया और आँखों से आँसू बह निकले।

संदीप के आँसू बेकाबू थे। उसने अपने दोनों हाथ आसमान की ओर उठाकर कहा—

हे भगवान! इतनी जल्दी क्या थी। तूने एक दोस्त को छिन लिया। उसकी आँखों में तो अभी सपने थे, हमारी दोस्ती के वादे थे, उसकी हँसी थी, उसकी दुआएँ थीं।"

वातावरण मातम में डूब गया। कॉलेज का वो दिन, वो पेड़, वो बेंच सब मानो आज गवाह थे दोस्ती के बिखरते रिश्ते के, और अधूरी रह गई हँसी के।

9.

कॉलेज के अंतिम वर्ष का अंतिम दिन था। परिसर में हर ओर विदाई का माहौल पसरा हुआ था। अमन और उसके दोस्त पेड़ की छाया तले बेंच पर बैठे थे। सभी के चेहरों पर मिलेजुले भाव, खुशी, यादें और बिछड़ने का दर्द स्पष्ट झलक रहे थे।

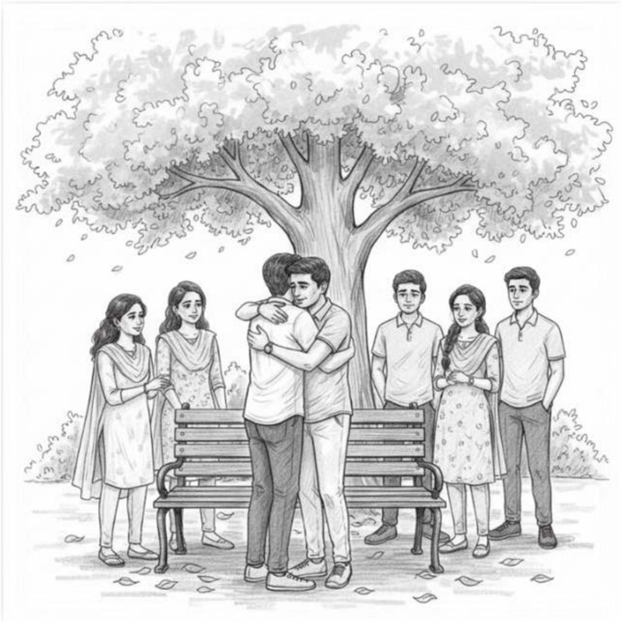

आज आख़िरी बार वे सब इस तरह साथ बैठे थे। अमन, संदीप, रीना और बाकी दोस्त एक-दूसरे को गले लगाकर विदा ले रहे थे। हल्की-हल्की हवा बह रही थी और पत्तों की सरसराहट उस क्षण को और भी भावुक बना रही थी। इसी बीच, विधु अपने दो-तीन साथियों के साथ अमन की ओर बढ़ा। उसके चेहरे पर गहरी उदासी छाई हुई थी। कुछ पलों तक दोनों आमने-सामने खड़े रहे, न कोई शब्द, न कोई हंसी। बस एक अजीब-सी खामोशी, जैसे समय ठहर गया हो।

विधू ने कहां—

"अमन मेरे से बहुत बड़ी गलती हुई मुझे माफ कर दो यार।"

अमन की आंखें कुछ पल के लिए ठहर सी गई, फिर होठों पर हल्की मुस्कान लिए, बिना कुछ कहें विधु को कसकर गले लगा लिया, और विधू इस तरह अमन के जीवन से हमेशा-हमेशा के लिए विदा हो गया।

*****

भाग 3

1.

कॉलेज की पढ़ाई खत्म होते ही अमन अपने गांव लौट आया। आज जब वो स्टेशन पर बस से उतरा, तो महसूस हुआ कि गांव के वे दो स्वर्ण साथी जो कल तक साथ पढ़ते, हँसते-खेलते थे

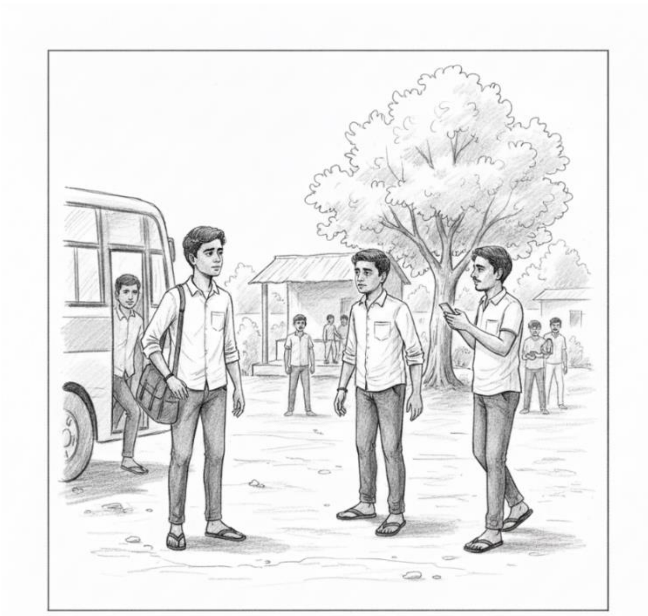

आज मुझे देखकर सिर इधर-उधर घुमा रहे थे। जैसे उन्हें डर हो कि कहीं मैं पास आ गया तो अन्य लोग क्या सोचेंगे। मानो उन्हें लग रहा हो कि मैं उच्च जाति का हूँ और यदि इन अमन जैसे दलित के साथ देखा गया तो उनका मान घट जाएगा। गांवों में अक्सर अनेक दलित युवाओं के साथ देखा गया है।

घर पहुंचते ही दादा जग्गू और दादी गवरी ने उसे कसकर गले लगाया। उनके झुर्रियों भरे चेहरे पर महीनों की चिंता साफ झलक

रही थी। अमन के कदम अभी थमे भी नहीं थे कि उसने गांव की हवा में फैला सन्नाटा महसूस किया। बात क्या है दादी माँ इतना सन्नाटा क्यों?

दादी गवरी ने भारी आवाज में कहा—

"बेटा, गांव में हालात अच्छे नहीं हैं। जैसे कोई अघोषित आपातकाल हमारे हिस्से में आ गया हो। भैरवकांत ने पंचायत बुलाकर दलितों का हुक्का-पानी बंद करवा दिया है।"

अमन ने चौंककर पूछा—

"क्या? क्यों, क्या हुआ ऐसा?"

दादी ने लंबी सांस ली और कहना शुरू किया—

"कल चौपाल पर पंचायत हुई। भैरवकांत ने एलान कर दिया अब दलितों को गांव की किसी भी दुकान से सामान नहीं मिलेगा। अगर किसी दुकानदार ने नियम तोड़ा तो उस पर जुर्माना लगेगा। यहां तक कि दूध वालों के दरवाजे पर भी यह मनाही लिखवा दी गई है।"

अमन सब सुनता रहा। उसके दिमाग में तूफान उठ रहा था।

"तो क्या सचमुच कुछ भी नहीं बदला? किताबों में बदलाव लिखा गया, नक्शों में नई रेखाएं खींची गईं, लेकिन लोगों के दिलों में वही पुरानी नफरत अब भी जिंदा है। बदलाव बाहर हुआ, भीतर कुछ नहीं बदला।"

दादा जग्गू ने बात आगे बढ़ाई—

"बेटा, यह सब दो-तीन दिन पहले की एक घटना के बाद हुआ। गांव के जंगल की तरफ, जहां आमतौर पर मवेशी चरते हैं, वहां कुछ दलित युवकों और सवर्ण लड़कों में झगड़ा हो गया। बात इतनी सी थी कि दोनों ने एक-दूसरे को आंखें दिखा दीं। लेकिन भैरवकांत को

यह कैसे बर्दाश्त होता कि ये नीच उसकी आंखों में आंख डालकर बात करें। बस, उसके अहंकार को चोट लग गई और आगे सुन।"

भैरवकांत ने झट से फरमान जारी किया— "पंचायत बिठाओ। आज ही फैसला होगा। इन नीचों को सबक सिखाना जरूरी है।"

दिन ढलने के बाद गांव की चौपाल पर सफेद धोती-कुर्तों में लिपटे लोग इकट्ठा हो गए। बिजली की रोशनी में उनके चेहरों पर सामंती घमंड साफ झलक रहा था। बातचीत गूंज रही थी "इन नीचों को अगर अभी नहीं रोका तो कल ये सिर चढ़ जाएंगे।"

"हुक्का-पानी बंद कर दो। दुकान से आटा-दाल मत देना। तभी समझेंगे।"

कुछ समझदार लोग जिनमें पुरोहित, पंडित और अन्य जात के व्यक्ति वहां मौजूद थे, जो धीमे स्वर में कह रहे थे, "भैरवजी, ऐसा मत कीजिए। बच्चे हैं, गलती हो गई होगी। हुक्का-पानी बंद करना ठीक नहीं।" लेकिन भैरवकांत का चेहरा गुस्से से तमतमा उठा। उसने खैनी की पीक जमीन पर थूकी और दहाड़ते हुए कहा जिसे नीच समझा, वही अब आंख दिखा रहे हैं। आज इन्हें बता देंगे इनकी औकात क्या है। सुन लो, आज से दलितों का हुक्का-पानी बंद। कोई भी दुकानदार उन्हें सामान देगा तो पांच सौ का जुर्माना और चौपाल पर सार्वजनिक अपमान।"

भीड़ में से कई आवाजें गूंजी— "ठीक कह रहे हैं भैरव जी! इनकी हद हो गई है।"

और देखते ही देखते, रात में चौपाल से निकला यह जहर सुबह होते-होते पूरे गांव में फैल गया।

जैसे ही यह खबर दलित बस्ती पहुंची, वहां अफरा-तफरी मच गई।

बुजुर्गों के चेहरे पर हताशा थी। उनके लिए यह सिर्फ दुकान से सामान का सवाल नहीं था, यह उनके अस्तित्व पर सीधा हमला था।

वे आसमान की तरफ सूखी आंखों से देख रहे थे, जैसे पूछ रहे हों— "कब खत्म होगा यह अन्याय?" युवाओं में गुस्सा था। कोई कह रहा था, "क्यों उलझे तुम लोग उनसे? हमें बता देते, हम मामला सुलझा लेते।"

दूसरा बोला— "किस बात का डर? यह नया दौर है। बाजार से सामान लाएंगे। लेकिन कब तक यह चलता रहेगा? कब तक हम इनकी दहलीज पर खड़े होकर अपमान झेलते रहेंगे?"

गांव में अब एक अनकहा डर पसरा हुआ था। दलित बस्ती की गलियां सूनी हो चुकी थीं। वहां की हवा भी मानो थम गई थी। लोग समझ रहे थे कि यह सिर्फ आज का संकट नहीं है, यह उनकी पीढ़ियों पर लादे गए अपमान की नई किस्त है।

अमन इस बार कुछ नहीं बोला, वह चुपचाप सुनता था रहा था।

2.

कुछ दिन पहले एक और घटित घटना.......

कातरगढ़ जहाँ सूरज तो हर सुबह निकलता है, लेकिन इंसान की सोच में अब भी अंधेरा पसरा हुआ है। जहाँ हवा में मिट्टी की खुशबू है, लेकिन दिलों में नफरत का धुआँ। जहाँ हर रोज मंदिर की घंटियाँ बजती हैं, लेकिन उन घंटियों को छूने की इजाज़त हर जात को नही। जहाँ एक माँ अपने इकलौते बेटे के लिए जीती है, पर दबंगों का जुल्म उसे दीवारों से घेर देता है।

इस गांव में एक विधवा औरत रहती थी। गरीब, पर अपने बेटे 'राम' के लिए हर दुःख सहती हुई। उसका पति कब का चला गया था, बाकी दुनिया से उसका कोई सहारा नहीं था। बस यही राम उसका आसरा था, उसकी आँखों का तारा, उसके थके कंधों का सहारा,

उसका जीने का कारण। राम मासूम था, खेल-कूद में लगा रहता, खेतों में दौड़ता, कभी पेड़ पर चढ़ता, कभी दोस्तों के साथ हंसता। लेकिन उसकी मासूमियत उस समाज की क्रूरता के सामने कहीं टिक नहीं पाती थी।

उस शाम का दृश्य गांव की आत्मा पर जैसे दाग बन गया। खेलते-खेलते राम गांव के ऊँचे हिस्से तक पहुँच गया। वहीं जहाँ जागीरदार भैरवकांत का आलीशान घर था, ऊँची मीनारें, बड़ा आँगन और हर तरफ रुतबा। राम को क्या पता था कि उसकी मासूमियत ही उसके लिए खतरा बन जाएगी। जागीरदार ने उसे देखा, उसकी नज़र में घृणा कौंधी। बिना कोई सवाल पूछे उसने आवाज दी—

"ऐई! छोरे इधर आ!"

राम काँपते हुए पास पहुँचा—

"हां!"

"किनका लड़का है तू।"

राम ने अपना और अपने खानदान का परिचय दिया।

जागीरदार भैरवकांत ने आदेश दिया—

"जा, वहां एक कोने में झाड़ू रखा है। उठा और आँगन में गिरे नीम के पत्ते साफ कर। किसी चीज को छूना मत। अछूत हो तुम, समझे?"

राम ने सिर झुका कर कहा—

"हां, समझ गया।"

सूरज ढल चुका था। शाम की ठंडी हवा चल रही थी, पर राम के भीतर डर की आग जल रही थी। वह झाड़ू उठाकर पूरे आँगन में सफाई करने लगा। पास खड़े पौता वर्जकांत, जागीरदार के आदमियों उसे घृणा भरी निगाहों से देख रहे थे। उन्हें लगता जैसे

उसकी मौजूदगी से आँगन अपवित्र हो जाएगा। बार-बार उसे बाथरूम साफ करने का काम सौंपा गया, जैसे उसका जीवन सिर्फ सेवा के लिए है। राम चुपचाप काम करता रहा। उसे प्यास लगी थी। लेकिन डर इतना कि वह कह भी न सका कि "मुझे पानी चाहिए" वह बार-बार इधर-उधर देखता रहा। कोई नहीं था। उसे मौका मिला तो पास रखे मिट्टी के मटके को छू लिया। शायद एक घूँट पानी उसकी सूखी जीभ को राहत दे देता। लेकिन तभी भैरवकांत ने उसे देख लिया।

उसकी आँखें लाल हो गईं—

"अरे अछूत! तेरी इतनी हिम्मत? मटके को छूने की! पता नहीं तुम कौन हो? तुम नीच हो! तुम्हारा धर्म क्या है? ब्रह्मा के पैरों से जन्मे हो तुम, सेवा करना तुम्हारा धर्म है! किसी सवर्ण की चीज छूने की हिम्मत कैसे की? अभी तुझे ऐसा सबक सिखाऊँगा कि फिर कभी किसी दलित बच्चे ने ऐसा सोचा भी न होगा!"

इतना कह कर भैरवकांत और उसके साथियों ने राम को नीम के पेड़ के नीचे उल्टा टांग दिया। उसकी टाँगें रस्सी में बंध गईं। उसका छोटा सा शरीर दर्द से छटपटा रहा था। वह चिल्लाया, रोया, माँ! पानी, लेकिन वहाँ कोई नहीं था। उसका दर्द सुनने वाला कोई नहीं था। आसमान की तरफ देखता वह मन ही मन पुकार रहा था—"हे भगवान! कोई तो है जो मुझे बचा ले!" पर ऊपर सिर्फ सुनसान आसमान था। रात में यह खबर आग की तरह फैल गई। पूरी दलित बस्ती में मातम छा गया। माँ बेहोश होकर गिर पड़ी। कोई मदद नहीं कर सका। गाँव की गलियाँ दुख से भर गईं।

वह विधवा मां अपने बेटे के लिए दौड़ती हुई, जागीरदार कह जाने वाले भैरवकांत के दरवाज़े पहुँची—"हुकुम! मेरे बच्चे ने क्या बिगाड़ा है? इतनी बड़ी सजा क्यों दी?"

भैरवकांत हंसा—"अपने बच्चे को समझा। तू जानती नहीं मैं कौन हूँ? तेरी औकात क्या है? तुम लोग नीचे ही रहो। सेवा करो, सिर झुकाओ। यही तुम्हारा धर्म है।"

उस रात दलित बस्ती में किसी ने खाना नहीं खाया। किसी ने बात नहीं की। लेकिन उनके मन में एक सवाल बार-बार उठता रहा क्या हम हमेशा ऐसे ही रहेंगे? क्या हमारा कोई सहारा नहीं? रात बीत चुकी थी। आसमान में हल्की रोशनी फैलने लगी थी। दूर खेतों में कोयल की कुहुक सुनाई दी, गौरैयों की चहचहाहट वातावरण में घुल गई। पक्षियों की मधुर धुन मानो किसी नए दौर के नए गीत सुना रही थी, एक ऐसे कल की आहट, जिसमें आज की पीड़ा का जवाब मिलेगा। सुबह की ठंडी हवा में नीम की पत्तियाँ सरसराईं, जैसे प्रकृति खुद राम की बेबसी, उसकी माँ के आँसू और बस्ती के दर्द को सुन रही हो। दलित बस्ती की झोंपड़ियों के दरवाज़े आधे खुले थे। अंदर कहीं कोई रो रहा था, कहीं चुप्पी पसरी थी।

अमन ने आँखें मलते हुए कहां—

"क्या तुम्हनें जो देखा वो सच था? क्या कोई इंसान इतना निर्दयी हो सकता है?"

अमन की आँखों में आँसू थे। उसकी आवाज़ काँप रही थी। कुछ पल अमन चुप रहा। बाहर से पक्षियों की आवाज़ फिर सुनाई दी। पक्षियों की मधुर धुन अब उनके दिलों में उतर चुकी थी। वह गीत अब सिर्फ सुबह की आवाज़ नहीं था, वह उनके भीतर जागी आशा का स्वर बन गया था।

3.

गांव लौटते ही अमन के मन में बस्ती की सबसे बुजुर्ग गंगा दादी माँ की याद कौंध गई। पिछली बार जब वह गांव आया था तब गंगा दादी माँ से मन भरकर बात करने का मौका नहीं मिला था। जैसे ही उसका मन हुआ, वह बिना रुके दौड़ पड़ा और सीधे गंगा दादी के कच्चे घर की ओर। वही पुराना खपरैल वाला मकान, दीवारों से झरती मिट्टी, और आंगन में खड़ा समय की मार झेलता नीम का पेड़ सब कुछ वैसा ही था। पर गंगा दादी और घर दोनों पर समय ने अपनी परतें चढ़ा दी थीं। आंखें धंसी हुईं, चेहरे पर झुर्रियों का जाल, शरीर की हड्डियाँ साफ दिखाई देतीं, थकान से टूटा हुआ शरीर मानो जीवन की अंतिम साँसें गिन रहा हो। फिर भी जैसे ही अमन को देखा, गंगा दादी के चेहरे पर खिली मुस्कान ने मानो थके शरीर में नई जान फूंक दी। अमन ने दौड़ते हुए उनके चरण छुए। आशीर्वाद लिया। गंगा दादी ने उसे माथे को चूमते हुए, गालों को सहलाते हुए और सिर पर हाथ फेरते हुए प्रेम से आशीर्वाद दिया –

"कैसे हो बेटा? राजी-खुशी हो।"

सूरज की आखिरी किरणें पश्चिम के क्षितिज में ढल रही थीं। शाम के रंग बदलते समय का संदेश दे रहे थे। दिन के बाद रात आती है, रात के बाद दिन, और उसी तरह जवानी के बाद बुढ़ापा। मां-बेटे की बातें मानो आसमान सुन रहा था।

गंगा दादी माँ की आँखों में विश्वास की चमक थी। वह धीमे स्वर में बोलीं –

"बेटा, मैं तुझमें वो चमक देखती हूं जो कई पीढ़ियों को रास्ता दिखाएगी। तू एक दिन ऐसा मुकाम हासिल करेगा, जो हमारे जैसे दलित युवाओं के लिए सूरज बनेगा। महापुरुषों का बलिदान व्यर्थ नहीं जाएगा। तू कारवां को आगे तक ले जाएगा, बेटा।"

अमन ने ये शब्द सुने तो उसके मन में बचपन की यादें ताजा हो गईं। उसे वह समय याद आया जब वह छोटी उम्र में भी गंगा दादी माँ से यही बातें सुनता था और दिल में आग सी जलती थी।

फिर गंगा दादी माँ ने गंभीरता से कहा –

"तेरा भला हो बेटा, पर यहाँ हाल बुरा है। भैरवकांत का अहंकार दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा है। दलितों पर अत्याचार की हदें पार हो रही हैं। समाज मुर्दा बना पड़ा है। सुनने का आदि हो चुका है। बिना गलती के गलती मान लेना, हाथ जोड़कर अपमान स्वीकार कर लेना, मानो यही परंपरा बन गई है। जब तक सोया हुआ समाज नहीं जागेगा, तब तक पुलिस-कानून भी कुछ नहीं कर पाएंगे।"

दादी माँ की आवाज में दर्द साफ झलक रहा था। फिर उन्होंने अपने अतीत की पीड़ा साझा की –

"तेरे दादा और हमारे पूर्वजों ने बहुत दुख झेले हैं। रोटी के साथ गाली परोसी जाती थी। शादी के बाद एक-दो रात बड़े लोगों के साथ बितानी पड़ती थीं। तेरे दादा ने इसका विरोध किया तो उन्हें पेड़ पर उल्टा लटका कर मार दिया गया। बेटा, आज हम स्वतंत्र हैं। हमारे पास कानून है। हम गलत के खिलाफ आवाज उठा सकते हैं। बहुत बदलाव आया है, पर जाति की घृणा अभी भी जिंदा है। अच्छे लोग भी हैं, पर बुरे लोगों की कोई कमी नहीं। बदलाव आया है पर बाहर, भीतर जहर आज भी घुला है। हमें एकजुट होना होगा।"

उन्होंने आगे बताया –

"कुछ दिन पहले भैरवकांत ने एक दलित लड़के को सिर्फ मूंछें रखने पर अपमानित किया, गाली दी और मारपीट की। पुलिस अपना फर्ज नहीं निभा पाई। समाज चुप रहा। बेटा, अब समय आ गया है कि हम आवाज उठाएँ। डर कर चुप रहना हमारे साथ हुए अत्याचारों को और बढ़ावा देगा।"

अमन की आँखों में आग भर आई। उसे लगा जैसे गंगा दादी माँ का हर शब्द उसकी आत्मा में उतर रहा हो। उनके चेहरे की झुर्रियों में छिपा संघर्ष, उनकी आँखों में बसा विश्वास, और उनके शब्दों में छिपी पीड़ा, सब उसके भीतर गूंजने लगा। शाम अब पूरी तरह ढल चुकी थी। नीम के पेड़ की छाया लंबी होकर आंगन में फैल गई थी।

4.

नया सवेरा अपने साथ नई उम्मीदें लेकर क्षितिज पर धीरे-धीरे उदय हो रहा था। पूरब की ओर से उठते हुए सूरज की सुनहरी किरणें आकाश को लालिमा से रंग रही थीं। गांव की पगडंडियों पर ओस की बूँदें अभी भी चमक रही थीं, मानो धरती ने अपने आँचल पर हीरे जड़ दिए हों। आम के बगीचे से आती मंद हवा में फूलों की हल्की-हल्की खुशबू फैली हुई थी। दूर कहीं मंदिर की घंटियों की ध्वनि गूँज रही थी, तो पास के तालाब से बगुलों का झुंड उड़ता हुआ दिख रहा था। पक्षियों की चहचहाहट, साईकिल की टनटन और गाड़ियों की घरघराहट सब मिलकर मानो किसी उत्सव का वातावरण बना रही थीं। आज नीरज घर लौट रहा था, दादी और दादा की आँखों में उत्सुकता और गर्व की चमक थी। रिश्तेदार, पड़ोसी और समाज के तमाम लोग घर के बाहर एकत्रित थे। नीरज, जिसकी ईमानदारी और मेहनत को देखते हुए, उसके मालिक ने उसे शहर की एक बड़ी कंपनी की जिम्मेवारी सौंप दी। आज वही नीरज अपने गांव लौट रहा था। साफ-सुथरे कपड़े, चमकते जूते और आत्मविश्वास से भरी चाल। अब सिर्फ साधारण लड़का नहीं बल्कि एक मिसाल बनकर। दोपहर की धूप हल्की-हल्की नरम थी, तभी गांव के बस स्टैंड से होते हुए घर की तरफ नीरज को आते देखा। उसकी आँखों में आत्मविश्वास, चेहरे पर गंभीरता और होंठों पर हल्की मुस्कान थी। लोग दौड़ पड़े

– "नीरज आ गए! नीरज बेटा घर आया है!" बुजुर्ग उसे आशीर्वाद देने लगे।

दोनों भाई सफलता की सीढ़ी पर थे लेकिन हर खुशी के साथ कुछ कटुता भी जुड़ी होती है। जब यह समाचार भैरवकांत के कानों तक पहुँचा, वही भैरवकांत जो हमेशा जाति के नाम पर दूसरों को नीचा दिखाने में आनंद लेता था, तो वह भीतर-ही-भीतर जलन से भर उठा। उसकी आँखों में ईर्ष्या और चेहरे पर तिरस्कार था। वह बड़बड़ाया –

"क्या? ये दलित छोरे! इतने बड़े आदमी बनने की होड़ में हैं? अरे, ये कैसे हो सकता हैं।

घर का आंगन आज भरा भरा लग रहा था जैसे किसी ने खाली चित्र को रंगों से भर दिया हो। चारों और बातचीत, हँसी खुशी, माहौल में ढल चुकी थी। दोनों भाई बचपन की तरह एक दूसरे से मस्ती कर रहे थे, ' दादाजी इन्हें समझाओ न, देखो न अमन कितना शरारती हो गया है।' वे बचपन की यादों में जी रहे थे। खुशी खुशी गले लग रहे थे।

दादाजी ने कहां "मुझे अपने आप पर गर्व हो रहा है।"

दादी गवरी पास बैठी थीं। उनके चेहरे पर माँ और दादी दोनों का स्नेह छलक रहा था। अमन ने आगे बढ़कर उनका हाथ पकड़ लिया और मुस्कुराते हुए बोला—

"दादी, तुम सचमुच कितनी प्यारी हो। आज भी बिल्कुल वैसी ही लग रही हो जैसी बचपन में लगती थीं। तुम्हारे चेहरे की मुस्कान देखकर सारा थकान दूर हो जाता है।"

दादी ने अमन के सिर पर हाथ फेरा और गहरी साँस लेकर बोलीं—

"हाँ बेटा, मुझे भी खुशी है बहुत बड़ी खुशी। आज वो दिन आ गया है जिसका इंतजार मैं बरसों से कर रही थी। जब तुम छोटे थे, आज

मैं तुम्हें वो सच बताऊँगी जिसे मैंने इतने वर्षों से अपने भीतर दबाकर रखा है। सच, जिसने हमारे परिवार की नींव हिला दी थी और जिसे जानना अब तुम्हारे लिए बहुत ज़रूरी है।"

दोनों भाई एक-दूसरे को देखने लगे। उनके चेहरे पर हैरानी और उत्सुकता थी।

"क्या बात है दादी? आप इतनी गंभीर क्यों हो गईं?" – नीरज ने पूछा।

दादी दूर कहीं अतीत में खो गईं। उनकी आवाज़ थोड़ी काँप रही थी।

"सुनो बेटों आज से बीच साल पूर्व, इस आँगन ने एक ऐसी घटना देखी थी, जिसने हमारी ज़िन्दगी बदल दी। तुम्हारे पिता की मौत कोई साधारण मौत नहीं थी। उन्हें मारा गया था क्योंकि उन्होंने सच्चाई के खिलाफ आवाज उठाई, इनके पीछे था भैरवकांत।"

इतना कहकर दादी ने एक गहरी साँस ली। पूरा आँगन सन्नाटे में डूब गया। हवा जैसे अचानक थम सी गई हो। नीरज के मन में पुरानी यादों की परछाइयाँ उभरने लगीं। वह उस समय मुश्किल से पाँच साल का था, जब यह घटना हुई थी। उस वक्त वह नाना के घर गया हुआ था। पिता की मृत्यु के बारे में उसने कई बार इधर-उधर से बातें सुनी थीं, पर कभी साहस नहीं जुटा पाया कि दादी से सीधे पूछे और दादी ने भी कभी बताना उचित नहीं समझा। उस समय अमन केवल दो साल का था।

"कैसी सच्चाई, दादी? और हमारे पिता के साथ ऐसा क्यों हुआ?"– अमन ने काँपती आवाज़ में पूछा।

दादी अपने आँसू पोछतें हुए, धीरे धीरे उन्हें अतीत की और ले गई।

अठारह वर्ष पूर्व —

दलित बस्ती में उस दिन अनोखी हलचल थी। हवा में खुशी की कुछ लहरें छुट्टी की तरह तैर रही थीं। गांव का एक युवा विवाह के बंधन

में बँधने जा रहा था और उसका सबसे बड़ा सपना था कि बिंदौली घोड़ी पर निकले। पर उस छोटे से सपने के पीछे गाँव की कड़वी हकीकत छिपी थी। एक ऐसा दबदबा जो सदियों से वहां कायम था। घोड़ी, डीजे, सार्वजनिक उल्लास ये सब उसी समाज के कुछ हिस्सों के लिए वर्जित थे।

यह बात समाज के दलित पंचों, गांव के कुछ पुराने ख़्यालात के व्यक्तियों और भैरवकांत को हजम नहीं हुई। भैरवकांत का कर्तृत्व और उसकी परंपरा यह थी कि दलितों की हर छोटी-सी-छोटी आँच को वह दबा दे। उसकी ताकत और गांव के कुछ बुजुर्गों की सोच ने मिलकर ऐसे नियम बना दिए थे जिन्हें चुनौती देना किसी के बस की बात नहीं था। दूसरी ओर दलित समाज के वे पंच थे जो परम्परागत तौर पर निर्णय करते आए थे, पर दिनों दिन उनकी भूमिका कमजोर होती जा रही थी। कुछ ने सामजिक बंदिशों को स्वीकार कर लिया था, कुछ ने डर को अपनाया था।

सभी की आंखों में विरोध और सहनशीलता का मिश्रित भाव था। बिंदौली का दिन आया। दुल्हा अपने सजे घोड़ी पर बैठने की तैयारी कर रहा था और सारा परिवार उसके चेहरे पर खुशी बिखेर रहा था। पर घोड़ी पर बैठते ही माहौल बदल गया। भैरवकांत और उसके आदमी लाठी हाथ में लेकर वहाँ आ खड़े हुए। उन्होंने गालियाँ दीं, अपमान किए और बारात पर लगाम डाल दी। दलित बस्ती में कोई आगे नहीं आया। भय और शर्म ने सबको पराजित कर दिया था। केवल एक पुत्र ही था जिन्होंने उस दमन के खिलाफ आवाज उठाई — जग्गू का बेटा बलवंत। उसने न केवल अपने दिल की हिम्मत दिखाई, बल्कि सार्वजनिक अपमान के सामने खड़ा होकर यह कहने की हिम्मत भी की, कि उसकी बिरादरी को भी मानवीय गरिमा का अधिकार है।

बलवंत अकेला था, पर उसका साहस भारी था। उसने भैरवकांत की गुस्ताख़ियों का जवाब उसी भाषा में दिया। थप्पड़ और गालियाँ और

दोनों दलों के बीच हाथापाई तक पहुँच गई। भीड़ चुपचाप तमाशा देखती रही, एक युवा दलित जो आगे बढ़ने लगा, उसके घरवालों ने उसे पीछे खींच लिया। एक तरह की निराशा, एक तरह का डर। माहौल में जो क्रूरता थी, वह अब सिर्फ शब्दों तक सीमित नहीं रही। भैरवकांत ने बलवंत को धमकी दी — "नीच जात, तुझे तीन दिन की मोहलत है, गांव से दफा हो जाना, वरना जान से हाथ धोना पड़ेगा।" दूल्हे की शादी तो संपन्न हो चुकी थी, पर उस युवा का सपना अधूरा रह गया। घोड़ी पर बिंदौली निकालने का सपना एक सपना बन रह गया।

देर रात को भैरवकांत के चले जाने के बाद बलवंत ने अपना गुस्सा निकालते हुए कहा — "ये निकम्मा समाज सोया हुआ था, यदि वह जाग जाता तो भैरवकांत आज यहां नहीं रहता। तुम्हें गुलामी की आदत पड़ चुकी है। तुम अपनी एकता कहां ले गए? बड़े-बड़े सपने दिखाने वाले कहां हैं? आज हमारी शर्म यही है कि एक आदमी के सामने पूरा समाज झुक गया। तुम सब चाहते तो उन बदमाशों को मार कर भगा देते, वे दुबारा हिम्मत कभी नहीं जुटाते। याद रखना एक दिन फिर आयेगे, इसी तरह माँ-बेटी को गाली देगे, मारेंगे, और तुम लोग देखते रहना। अब कहां है तुम्हारी एकता, कहां छुपे बैठे हैं समाज में डिंग हांकने वाले। मेरी आपसे विनती है "कि जब तक तुम मारना नहीं सीखोगे, मरते रहोगे। मैं तुम्हे हिंसा नहीं सिखा रहा बल्कि आत्मरक्षा करना सिखा रहा हूं। कभी देखा है मुसलमानों और सरदारों के साथ कम अत्याचार क्यों होते हैं? बहू बेटियों के साथ कम रेप क्यों होते हैं? उन्हें मूंछ ना रखने जैसी घटना नहीं होती क्यों? क्योंकि वो मार देते हैं। डरता नहीं वो समाज एक के पीछे हजारों की संख्या में तलवार लेकर बार निकल आता हैं। आखिर झुकना किस बात का, तभी तो उनके साथ अत्याचार नहीं होते। भैरवकांत जैसा व्यक्ति कुछ नहीं कर पाते। तुम्हे आरंभ से दबाया जा रहा है और तुम डर डर के मर रहे हों।"

बलवंत के आवाज़ में दुख था, और गहरा सवाल भी था। "क्या हमारा समाज मर चुका है कि वह अपने अधिकारों के लिए आवाज़ नहीं उठाता?"

अगले दिन मसले का औपचारिकरण हुआ आस-पास के गांवों के दलित पंचों ने पंचायत बुलाई। पर पंचों ने दुर्भाग्यवश न्याय नहीं, दंड तय किया। घोड़ी लाने के कारण दलित समाज को उनके कथित "परंपरा-उल्लंघन" पर दंडित कर दिया गया। यहाँ दंड का मतलब केवल मौखिक मना नहीं था पूरा समाज आर्थिक और सामाजिक तौर पर दबाया गया। दलित पंचायत ने निर्णय लिया कि समाज को सामाजिक बहिष्कार और आर्थिक जुर्माने में रखा जाए। पूरे समुदाय पर दंड थोप देना, ताकि सबको यह संदेश मिले कि व्यवस्थाओं के खिलाफ जाना महँगा पड़ेगा।

यहां न्याय की सच्ची भाषा खो गयी थी। जिस गलती की वजह से दंड दिया जाना चाहिए था। वह किसी एक व्यक्ति की थी। पर निर्णय पूरे गांव के खिलाफ जारी कर दिया गया। दंड के नाम पर धन की वसूली, अनावश्यक भोजों की व्यवस्था, और प्रतिकूल शर्तें ये सब उस प्रणाली अव्यवस्था को दर्शाते थे, जहाँ गलत करने वाला छूट जाता है और समूह को भुगतना पड़ता है। यह व्यवस्था अपराधीकरण नहीं, सामूहिक दमन का रूप थी। लेकिन अचल में गलती किसी की नहीं थी। कहने को ये सज़ा पंचों की ओर से दी गयी थी पर असल में यह उस सामाजिक तंत्र की ताकत थी जब दोषी को सज़ा देना हो तो उसे उसके परिवार के साथ साथ पूरे समाज को एक कठोर सजा के जाल में फँसाया जाता है? यह बेमानी और अन्याय था।

बलवंत की पीड़ा, दुल्हा का अधूरा सपना और पंचायत का कठोर फैसला इन सबने उस गाँव की यादों में एक लम्बी खरोंच छोड़ दी। पर वही खरोंच भविष्य की एक पहचान भी बनती है।

दोपहर का समय था। आसमान से तपती धूप मानो आग की धार बरसा रही थी। हवा का एक झोंका तक ठहर गया था, जैसे प्रकृति भी अपनी साँसें रोककर किसी अनहोनी का इंतज़ार कर रही हो। घर के आँगन के बाहर नीम का पेड़ खड़ा था। उसकी छाया तपी हुई धरती पर थोड़ी राहत का अहसास देती थी। उसी छाँव में बलवंत और उनकी पत्नी थकान मिटाने के लिए बैठे थे।

अचानक गाँव की सुनसान गलियों से कुछ लोग निकले। उनके चेहरे कपड़ों से ढके हुए थे। काली आँधी की तरह जो बिना बताए सब कुछ उजाड़ कर चली जाती हैं। हाथों में तलवारें और लाठियाँ चमक रही थीं। उनकी आँखों की लाली और कदमों की रफ्तार बता रही थी कि वे किसी खौफ़नाक इरादे से आए हैं।

बलबंत और उनकी पत्नी कुछ समझ पाते, उससे पहले ही उन पर हमला हुआ। वार पर वार, चीखों को दबाती तलवारों की खनक और लाठियों की गूँज कुछ ही पलों में दोनों लहूलुहान होकर ज़मीन पर गिर पड़े। उनकी साँसें थम चुकी थीं, देह खून से भीगी हुई थी और आँगन मौत की चादर ओढ़ चुका था। घर का यह दृश्य असहनीय था। गवरी बलवंत की माँ चीख मारकर ज़मीन पर गिर पड़ी। पिता जग्गू भी अपने ही बेटे-बहू की निस्पंद देह देख ठिठक गए, जैसे उनकी आत्मा को किसी ने झकझोर कर चुप करा दिया हो। उनकी आँखों से आँसू नहीं, बल्कि एक गहरा मौन बह रहा था—वह मौन जिसमें दर्द, अपमान और असहायता एक साथ घुल चुके थे।

अतीत की बातें सुनकर दोनों भाई गहरे भावुक हो गए। आँगन में सन्नाटा छा गया। उनकी आँखों में दर्द की लकीरें साफ़ झलक रही थीं, जैसे भीतर कोई बुझी हुई आग अब भी अंगारों में सुलग रही हो।

अमन ने दादी की ओर देखा और कहां—

"दादी, तुम चिंता मत करो वक्त सबका बदलता है। मैं, अमन, शपथ लेता हूँ कि एक दिन भाई नीरज की बारात इसी गाँव से होकर

निकलेगी। मैं अब कानून पढ़ूँगा लोगों को न्याय दिलाऊँगा। और एक दिन भैरवकांत का भी वक्त बदलेगा, इंसाफ जरूर मिलेगा दादी।"

धीरे-धीरे सूरज आसमान के किनारों में ढल चुका था, और चंद्रमा की शीतल रोशनी पूरे आँगन में फैल गई थी।

5.

गांव के बीचों-बीच एक बड़ा मंदिर खड़ा था। यह मंदिर न केवल धार्मिक स्थल था, बल्कि पूरे गांव में सामाजिक सत्ता और प्रतिष्ठा का प्रतीक भी माना जाता था। मंदिर का संचालन आर. आर. नारायण शास्त्री नामक ब्राह्मण पुजारी और भैरवकांत नामक जागीरदार पुरोहित करते थे। मंदिर में प्रवेश केवल उच्च जाति के लोग ही कर सकते थे। अछूत और शूद्रों का प्रवेश यहां सख्त वर्जित था।

कहते हैं, इस मंदिर में तो कुत्ता भी प्रवेश कर सकता था, लेकिन दलितों के लिए मंदिर की दहलीज तक पार करना मना था। गांव के दलित लोग इस अन्याय से बेहद परेशान थे। उनकी पीढ़ियों ने सदियों से छुआछूत झेली थी, और यह परंपरा आज भी मंदिर, घरों, कुओं और सार्वजनिक स्थानों में कायम थी। कुछ बुजुर्ग और अनपढ़ युवक मंदिर तक आते-जाते रहते, लेकिन उन्हें केवल सीढ़ियों तक ही जाने की अनुमति थी। सीढ़ियों पर बैठकर वे बीड़ी, अमल और ' भोले नाथ ' के नाम गांजे का सेवन करते, नाक रगड़ते और जूते खाते। यह दृश्य देखकर ऐसा लगता था जैसे वर्षों की गुलामी की आदत उनके भीतर बैठ गई हो।

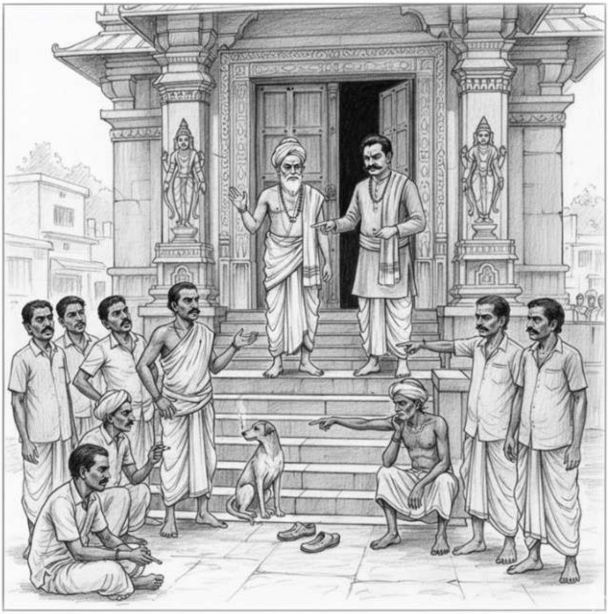

मंदिर के पुजारी आर. आर. नारायण शास्त्री और भैरवकांत, दलितों के अधिकारों के विरोध में हमेशा खड़े रहते। वे धर्म के रखवाले ही नहीं बल्कि धर्म के ठेकेदार लगते थे। उनका कार्य उच्च जाति का प्रभुत्व बनाए रखना था।

कुछ गांववासी इस अन्याय के विरोध में उठ खड़े हुए। उन्होंने कहा कि उन्हें भी मंदिर में प्रवेश दिया जाना चाहिए। लेकिन भैरवकांत और शास्त्री जी ने उन्हें धमकाया और कहा – "तुम शूद्र हो, नीच जाति के हो। तुम्हारे स्पर्श से भगवान अपवित्र हो जाएगा।" यह सुनकर दलित लोग और अधिक नाराज हो गए। उनकी आंखों में न केवल गुस्सा था, बल्कि पीढ़ियों से चले आ रहे अपमान का दर्द भी झलक रहा था।

एक शाम, जब आसमान पर तारे टिमटिमा रहे थे और हवा में पतझड़ की खुशबू घुली हुई थी, दलित बस्ती में पंचायत बुलाई गई। बस्ती के लोग दो धड़ों में बंटे हुए थे। एक तरफ वे लोग थे जिनकी आस्था भगवान में गहरी थी, लेकिन अपने से ज्यादा भरोसा मूर्ति में कहीं ज्यादा था। कहते हैं भगवान के मर्जी के बिना एक पत्ता तक हिल नहीं सकता। दूसरी तरफ वे लोग थे जो सदियों से चली आ रही वर्णव्यवस्था के खिलाफ थे। उन्हें पता था कि इन पत्थरों से बनाई कलाकृति जिसे मूर्ति का रूप दिया गया। उनसे तो कई गुना ज्यादा शक्ति मूर्ति बनाने वाले में है। वे जानते थे कि सदियों से भेदभाव सहते हुए भी जिन्हें हम भगवान मानकर अगरबत्ती जलाते रहे, उन भगवान् ने हमे कभी कुछ नहीं दिया।

"मै किसी देवी देवता, भगवान यहां धार्मिक प्रतीक का अपमान नहीं कर रहा। मेरा मकसद अपने भाइयों को जाग्रत करना है न कि पत्थर में प्राण डालने जैसा कुछ।"

पहले वाले की सोच भ्रष्ट हो चुकी थी; उन्हें समझने और सोचने की शक्ति कम ही बची थी। दूसरी तरफ के लोग कह रहे थे, "हमें मंदिर जाने की जरूरत नहीं। मंदिर में बैठा भगवान हमें कुछ नहीं दे सकता। जो कुछ भी मिला, वह बाबा साहब और महापुरुषों ने दिया।" कुछ लोग कहते थे, "हमें अपना खुद का मंदिर बनाना चाहिए।"

अमन और नीरज भी पंचायत में थे। वे बस्ती के पढ़े-लिखे युवा थे, कुछ लोगों को जलन हो रही थी। कोई ओर नहीं बल्कि हमारे समाज के ही लोग थे, जिसे कई लोग ईर्ष्या से देखते थे। उसकी आंखों में साहस और चेतना का मिश्रण साफ झलक रहा था।

अमन ने आवाज उठाई –

"कहाँ है तुम्हारा भगवान? कहां छुपा बैठा है? अगर वह सच में है, तो सामने क्यों नहीं आता? दलितों के साथ हो रहे अन्याय को देख छुप क्यों है?

हाँ, एक बात बताऊँ मानने और जानने में बहुत बड़ा अंतर होता है।

'मानना' वह है, जब हम बिना किसी अनुभव या प्रमाण के किसी बात को सत्य मान लेते हैं। जैसे कोई कहे ईश्वर है, और आप बिना देखे, बिना अनुभव किए मान लें तो यह मानना हुआ। लेकिन 'जानना' वह है, जब कोई बात अपने स्वयं के अनुभव और समझ से सत्य सिद्ध हो। जैसे आपने स्वयं सूरज की गर्मी महसूस की यह जानना हुआ। जिसे देखा नहीं, बिना अनुभव या प्रमाण के उसे कैसे कहें कि भगवान होता है? अगर मैं कह दूँ कि दूसरे ग्रह पर एलियन हैं, पर उन्हें कभी देखा नहीं, बिना किसी प्रमाण के फिर भी मान लूँ तो यह मानना होगा। जानना इस लिए नहीं क्योंकि उसका प्रमाण नहीं।

तुम्हे मंदिर जाने की कोई जरूरत नहीं। बहुत हो गई तुम्हारी गुलाम गिरी। उठो! जागो! शिक्षित बनो! समाज को नया रास्ता दिखाओ। अमन की बातें सुनकर बस्ती के लोग सोच में पड़ गए। कई वर्षों से दबा दर्द, अपमान और अन्याय उनके भीतर उमड़ रहा था। कुछ बुजुर्ग आंखों में आंसू लेकर सिर झुकाए बैठे थे, जबकि कुछ युवा अपने भीतर की आग को महसूस कर रहे थे। अमन की आवाज़ ने उन सभी को झकझोर दिया।

6.

घर में खुशियों की हल्की-हल्की सरसराहट चारों ओर फैल रही थी। दीवारों पर रंग-बिरंगे रंगों से चित्रकारी की जा चुकी थी। घर के लोग शादी की तैयारियाँ में लगे हुए थे। रसोई से कढ़ाई में उठती घी की मीठी खुशबू, घर के हर कोने में प्रेम की मिठास घोल रही थी। बर्तन

खनक रहे थे, हँसी की आवाजें आ-जा रही थीं। बच्चे दौड़ते, कूदते, हँसते हुए बस्ती में एक नई जान डाल रहे थे।

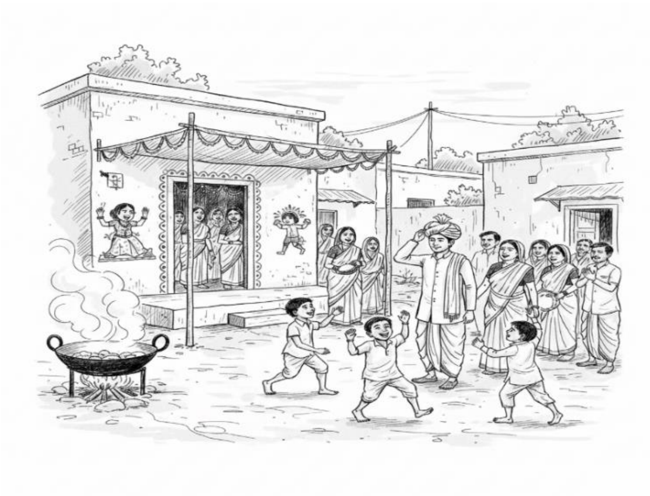

नीरज की शादी की तैयारियाँ जोरों पर थीं। आज बिंदौली निकलने वाली थी। दूल्हे की पगड़ी तैयार हो चुकी थी, और घर के बाहर मंडप सजाया जा चुका था। औरतें गीत गा रही थी, उनकी आवाज़ों में उत्सव का उल्लास था। दलित बस्ती में यह कोई आम बात नहीं थी। यह शादी, यह उल्लास, और यह आत्मविश्वास सब मिलकर किसी बदलाव की आहट दे रहे थे। पर इस खुशी के बीच, हवा में एक अदृश्य डर भी तैर रहा था। लोग मुस्कुरा तो रहे थे, पर भीतर से हर कोई जानता था कि यह कदम उस पुरानी व्यवस्था को ललकारने वाला है, जो सदियों से उन्हें झुकाए हुए थी।

इसी बीच, एक खबर आग की तरह गांव भर में फैल गई —

"नीरज की बिंदौली घोड़ी पर निकलेगी!"

बस, इतना सुनते ही जैसे गांव का संतुलन हिल गया।

यह खबर जब भैरवकांत के कानों तक पहुँची, तो उसका दिमाग सरक गया। वह अपनी कुर्सी पर बैठा तड़ाक से उठा।

"क्या कहा तूने?" सेवक से पूछा।

"दलित बस्ती में नीरज की बारात घोड़ी पर निकलेगी? जी हुकुम! सब लोग यही बोल रहे हैं।"

भैरवकांत की आँखों में गुस्से की लपटें उठने लगीं। होंठों पर एक तिरछी, अपमानित मुस्कान उभर आई।

"नीच लोग अब घोड़ी पर चढ़ने का ख्वाब देखने लगे हैं!"

उसके भीतर एक पुराना डर और अहंकार एक साथ जाग उठा था।

कुछ देर बाद, वह अपने तीन-चार साथियों के साथ जग्गू के घर की ओर निकल पड़ा।

जग्गू के घर के सामने पहुँचते ही भैरवकांत ने ऊँची आवाज़ लगाई—

"जग्गू! बाहर निकल जानता है तू क्या करने जा रहा है?"

जग्गू, उसकी पत्नी और बेटा अमन बाहर आए।

"जी हुकुम, क्या बात है?" जग्गू ने हाथ जोड़कर कहा।

"सुना है तू अपने लड़के की बिंदौली घोड़ी पर निकालने वाला है?"

जग्गू ने कहां "जी हुकुम, सबकी तरह हम भी चाहते हैं कि हमारे बेटे की बिंदौली घोड़ी पर निकले।"

भैरवकांत का चेहरा लाल हो गया।

"बंद कर यह नाटक! तेरी औकात क्या है? तुझे किसने ये अधिकार दिया? ये गांव तेरे बाप का नहीं है। घोड़ी पर बैठना तेरी जात के लिए नहीं बना। समझा?"

जग्गू चुप रहा। उसके पीछे खड़ी उसकी पत्नी का चेहरा पीला पड़ गया था।

अमन से रहा नहीं गया। वह आगे बढ़ा और बोला —

"क्यों साहब? क्या हम इंसान नहीं हैं? अगर तुम्हारी बिंदौली घोड़ी पर निकल सकती है, तो हमारी क्यों नहीं?"

भैरवकांत गरज उठा —

"तेरी हिम्मत कैसे हुई मेरे सामने जुबान चलाने की!" इतना कहते हुए उसने अमन के गाल पर जोरदार थप्पड़ जड़ दिया।

अमन आगे बढ़ा, मगर दादा ने कंधा पकड़कर रोक लिया। भैरवकांत उँगली उठाते हुए बोला, "सुन ले जग्गू, अगर तेरे बेटे की बिंदौली घोड़ी पर निकली, तो तेरे घर के दरवाजे पर खून बहेगा!" इतना कहकर वहां से चला गया।

भैरवकांत की धमकी के बाद घर के भीतर जैसे सन्नाटा छा गया।

जग्गू चुप था। उसके चेहरे पर डर था। उसने अपनी पत्नी गवरी को धीरे से कहां —

"मत कर नीरज को घोड़ी पर चढ़ाने की जिद, जीना मुश्किल कर देंगे ये लोग।"

गवरी ने लंबी साँस ली और धीमे स्वर में कहा —

"अगर आज हम डर गए, तो हमारी आने वाली पीढ़ियाँ भी डर में जीती रहेंगी, जग्गू। कभी न कभी किसी को तो इन जैसे लोगों के सामने खड़ा होना ही पड़ेगा। कब तक मुर्दों की तरह जीते रहोगे?

झुकना तुम्हारी आदत बन चुकी है।"

"दादा, ये सिर्फ़ शादी नहीं है हमारी इज्जत की लड़ाई है। अगर आज झुक गए तो फिर कभी सिर नहीं उठा पाएंगे।" अमन ने कहा।

ढोल बाजे के साथ बंदौली की तैयारी शुरू हो गई। समाज की औरतें गीत गा रही थीं। अमन ने सुरक्षा के इंतज़ाम भी करवा लिए थे। सफेद घोड़ी सज चुकी थी, घोड़ी को रंग-बिरंगे फूलों की मालाएँ और मोतियों की झालरें से सजाई गई।

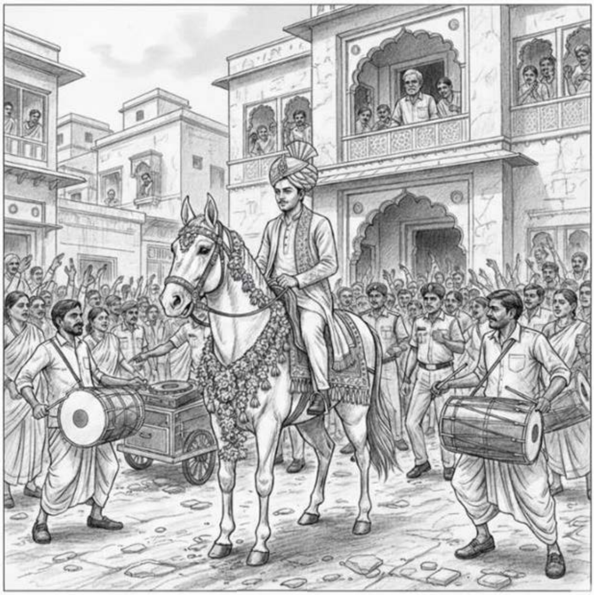

जब नीरज घोड़ी पर चढ़ा, तो मानो आसमान में नया चांद निकल आया, ऐसा प्रतीत हो रहा था। ढोल की गूँज और डीजे की तेज़ धुन के बीच बिंदौली निकलने को थी। खुशी और डर का मिश्रण भाव लोगों के चेहरों पर साफ़ झलक रहा था। पुलिस बल के साथ गांव में भैरवकांत की हवेली के सामने से होकर जब बिंदौली निकली तब भैरवकांत अंदर बरामदे में नफरत का जहर घोल रहा था। गांव के हर कोने में सवर्ण लोग खिड़कियों से झांकने लगे। ढोल और डीजे

बज रहे थे, बड़े और छोटे नाच रहे थे, और हर कदम पर बस्ती का सीना चौड़ा होता जा रहा था।

रात के करीब तीन बजे का समय था। बिंदौली का कार्यकम संपन्न हो चुका था। पुलिस बल वापस जा चुका था। लोग थके हारे विश्राम करने घरों में चले गए, तभी एक गोली की आवाज़ ने सन्नाटा चीर दिया। गोली सीधी जाकर लगी जग्गू के घर के दरवाजे जाकर लगी। सब डर गए। बच्चे माँओ की गोद में छुप गए। किसी ने खिड़की से बाहर झाँकने की हिम्मत नहीं की। अमन दौड़ा बाहर निकलने को, मगर नीरज ने रोक लिया।

"अमन रुक बाहर मत निकल, वे हमें डराना चाहते हैं। अब बाहर जाना ठीक नहीं। रुक पुलिस को कॉल करते हैं।" बार बार पुलिस को कॉल करने बावजूद कोई जवाब यहां प्रतिक्रिया नहीं। मुर्दे समाज के साथ पुलिस भी सोई हुई थी।

घर के अंदर परिवार रिश्तेदारों में डर के साथ साथ गुस्सा भी था जो धीरे-धीरे आत्मविश्वास में बदल रहा था। हाथ में जो मिला, उसे हथियार बना लिया, किसी के पास दरांती, किसी के पास कुल्हाड़ी, कोई लाठी पकड़े बैठा था। सब दीवारों के पीछे छिपे तैयार थे, अगर हमला हुआ तो पीछे नहीं हटेंगे। रात भर कोई कोई सोया नहीं, आखिर सोए तो सोए कैसे?

पड़ोस में कुछ अपनी ही बिरादरी के लोग सोच रहे थे अच्छा हुआ भैरवकांत ने गोलियां चलाई इनके साथ तो ऐसा ही होना चाहिए, भीतर-ही-भीतर खुश हो रहे थे। और जब कुछ अच्छा हो रहा होता हैं तो उन्हें भीतर-ही-भीतर जलन हो रही होती हैं। समाज को पीछे धकेलने वाले पहला कोई और नहीं बल्कि हमारे समाज के कुछ जलनखोर होते हैं जिन्हें दूसरों के घर खुशी देखी नहीं जाती। यही सबसे बड़ी कमजोरी है जो समाज को आगे बढ़ने नहीं देती। जहाँ

किसी के हौसले पर ताली नहीं बजती, बल्कि मन-ही-मन उसके टूटने की प्रतीक्षा होती हैं।

सुबह जब सूरज उगा, तो गांव की हवा बदली हुई थी। पुलिस तहकीकात करने आई और फिर चली गई। बस्ती में अमन ने पहली बार इतनी हिम्मत की आखिर भाई को घोड़ी पर बिठा कर ही रहा। भैरवकांत की धमकी बेअसर हो चुकी थी। दलित बस्ती ने पहली बार सिर उठाकर सांस ली थी।

*****

भाग 4.

1.

शाम अपने होशो हवाश में थी। आसमान पर हल्का नीला अंधेरा उतर आया था और धीरे-धीरे रात की नमी फैलती जा रही थी। पक्षी अपने बसेरों की ओर लौट रहे थे, मानो दिनभर की उड़ान के बाद उन्हें घर की चिंता सताने लगी हो। पशु चराई से थके लौट रहे और कुछ अपने बच्चों के पास जाने की जल्दबाजी में थे तो कुछ शांत कदमों से आगे बढ़ रहे थे। खेतों से लौटते किसान थकान से भरे थे, पर चेहरे पर घर पहुँचने की संतुष्टि की हल्की मुस्कान थी।

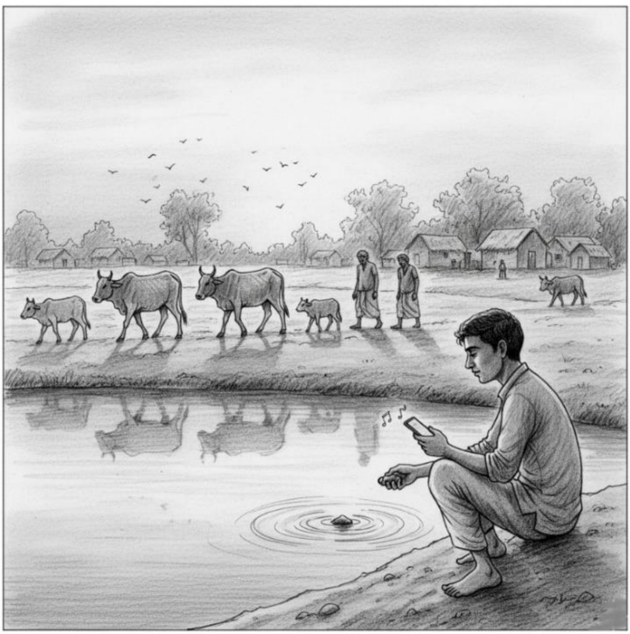

चारों तरफ एक अजीब-सा सुकून बिखरा था, जैसे दिनभर की भाग-दौड़ के बाद सब कुछ थम गया हो और जीवन एक पल को सांस ले

रहा हो। दूर से पक्षियों की 'चे-चे-चे' की आवाजें आ रही थीं, जो सुनने में थकान से जूझते जीवन का संगीत लग रही थीं। मानो हर प्राणी अपने-अपने घरौंदे में लौटते हुए गाना गा रहा हो। शाम का राग अपने चरम पर पहुँच चुका था। गांव कातरगढ़ की सीमा पर, तालाब के किनारे रेत का एक टीला था। उसी पर अमन अकेला बैठा था। हाथ में छोटे-छोटे कंकर लेकर वह उन्हें तालाब की सतह पर उछाल रहा था। कंकर गिरते ही गोल-गोल तरंगें बनतीं और फिर धीरे-धीरे मिटती जातीं। तालाब का पानी स्थिर-सा था, पर उसकी सतह पर इन लहरों ने अमन के मन की हलचल को जैसे रूप दे दिया था। पास ही उसके मोबाइल से धीमे स्वर में गाना बज रहा था —

"ठहरे हुए पानी में कंकर न मार सावरे,

मन में हलचल मच जाएगी बावरे..."

अमन उस संगीत में डूब गया। उसे लग रहा था जैसे तालाब का ठहरा पानी उससे बात कर रहा हो कि "अपने भीतर की बेचैनी को शांत करो और शांत रहो।"

कला स्नातक (बीए) की पढ़ाई पूरी करने के बाद घर में उसका मन खाली-सा हो गया था। आगे क्या करना है? किस रास्ते जाना है? लॉ करना ठीक रहेगा क्या? संदीप और रीना आगे साथ देगे यहां नहीं? इन सवालों ने उसकी सोच को उलझा रखा था। उसे कोई साथी चाहिए था, कोई जो उसकी बेचैनी समझे। मन भारी था, पर शब्द नहीं मिल रहे थे। अमन ने संदीप को कॉल मिलाया। लंबी घंटी के बाद उसने फोन उठाया, दोनों ने एक दूसरे को अपना हालचाल पूछने के बाद अमन ने पढ़ाई को लेकर आगे बात बढ़ाई तो संदीप ने यह कहते हुए मना कर दिया कि मैं अब मुंबई में अपने भाई की मोबाईल शॉप पर सेटल हो गया हूँ मैने पढ़ाई छोड़ दी है। इतना कहते ही फोन कट गया। मानो जैसे रिश्ता यही तक था। संदीप के साथ गुज़रे कॉलेज के दिन, वह हँसी, वो बहसें, सब धीरे-धीरे धुंधली

होने लगी थी। कभी जिस दोस्ती पर उसे सबसे ज़्यादा भरोसा था, आज वही सबसे दूर जा चुकी थी। अमन ने महसूस किया कि कुछ लोग हमारी ज़िंदगी में आते हैं केवल एक अध्याय लिखने के लिए, संदीप का अध्याय, अमन के जीवन से हमेशा के लिए समाप्त हो चुका था। अंततः उसने अपने मोबाइल में रीना को कॉल किया और दो दिन बाद मिलने की इच्छा जाहिर की।

दो दिन बाद...

शहर की झील के किनारे वह जगह, जहाँ वे अक्सर मिलते थे, अमन पहले ही पहुँच गया। झील की सतह पर हल्की लहरें उठ रही थीं। किनारे की पत्थरों पर बैठा अमन बेचैन था। उसकी निगाह बार-बार रास्ते पर जा टिकती, कब आएगी? वादा तो किया था, लेकिन क्या वह निभाएगी? मन में एक अजीब-सी घबराहट थी।

तभी दूर से रीना आती दिखाई दी। उसने हल्के रंग का टॉप और स्कर्ट पहना था। चलते हुए उसके बाल हवा में लहरा रहे थे। अमन की आँखों में चमक आ गई।

"अमन, how are you? रीना ने मुस्कुराते हुए पूछा।"

"I'm fine... रीना, तुम इन कपड़ों में?"

रीना ने शरारती अंदाज़ में जवाब दिया, "क्यों? क्या हुआ? अच्छा नहीं लग रहा क्या?"

अमन मुस्कुराया, "बहुत शानदार लग रहा है, रीना।"

दोनों हँस पड़े। उनके बीच कोई औपचारिकता नहीं थी। वे एक-दूसरे को इतने नज़दीक से जानते थे कि शब्दों की ज़रूरत ही नहीं पड़ती थी। महीनों का फासला जैसे मिट चुका था। झील का दृश्य उनकी आँखों में कैद हो गया था।

कुछ पल चुप रहने के बाद रीना ने धीरे से कहा, "अमन बताओ न, आगे क्या करना है?"

"दादी चाहती हैं कि मैं एक एडवोकेट बनूँ। लोगों के साथ हो रहे अन्याय के खिलाफ आवाज उठाऊँ। अगर तुम्हारी भी यही इच्छा है तो बताओ। मिलकर एकजुट हो जाएँ ताकि दूसरों के लिए खड़े हो सकें।"

रीना की आँखों में चमक आ गई। उसने तुरंत कहा, "हाँ, यही तो मैं भी चाहती हूँ।"

दोनों ने उसी समय एक तारीख तय कर ली। उस दिन वे जेएनवीयू लॉ कॉलेज जोधपुर में एडमिशन के लिए आवेदन करेंगे। वहां झील के किनारे घंटों बैठकर पढ़ाई, भविष्य, सपनों और संघर्ष की बातें करते रहे। उन दोनों की यह मुलाकात सिर्फ दो दोस्तों की नहीं थीं यह एक साझा सपना था। एक ऐसा सपना जिसमें वे न सिर्फ अपने लिए, बल्कि उन सभी के लिए खड़े होना चाहते थे, जिन्हें आवाज नहीं मिली। झील के किनारे की यह शाम उनके जीवन की दिशा बदलने वाली थी। यह एक नई शुरुआत का संकेत था।

घर लौटने के बाद अमन ने दादा जग्गू और दादी गवरी को सारी बातें बताईं—कि वह लॉ में एडमिशन लेने जा रहा है। यह सुनकर जैसे घर की चौखट तक रोशन हो उठी। दादा की आँखों में एक नई चमक आ गई और दादी गवरी का चेहरा प्रसन्नता से दमक उठा। हर माँ-बाप का सपना यही होता है कि उनका बेटा या बेटी वहाँ तक पहुँचे, जहाँ तक वे खुद कभी न पहुँच पाए। उनकी अधूरी इच्छाएँ संतान की उपलब्धियों से पूरी होती हैं। अमन के दादा-दादी के लिए यह क्षण वही था, मानो वर्षों से दबे सपनों ने आज साँस ली हो। दादी तो पहले से ही चाहती थीं कि उनका बेटा, उनका दुलारा, उनका राजकुमार, वकील बने। एक ऐसा वकील जो न केवल अपनी ज़िंदगी संवार ले, बल्कि उन गरीबों, दबे-कुचलों और वंचितों को भी न्याय

दिलाए जिनकी आवाज़ आज भी अदालतों की दहलीज तक पहुँचते-पहुँचते दम तोड़ देती है। उनके लिए बेटा केवल बेटा नहीं था, बल्कि उम्मीद की वह मशाल था, जो समाज की अंधेरी गलियों को रोशन कर सकती थी।

दादी ने गर्व से कहा—

"पुत्र, एडमिशन कब लेना है यह बता दे। पैसों की कोई चिंता मत करना। तू बस पढ़ाई कर और नाम रोशन कर। तेरी राह में मैं ही नहीं, पूरा घर खड़ा है।"

दादा जग्गू ने भी अपना कांपता हुआ हाथ अमन के सिर पर रखा और कहा, "बेटा, यह कदम सिर्फ तेरी ज़िंदगी नहीं बदलेगा, बल्कि तेरे बाद आने वाली पीढ़ी के लिए भी नई राह खोलेगा। तू हम सबके अधूरे सपनों को पूरा करने जा रहा है।"

यह सुनकर अमन के हृदय में एक अजीब-सी दृढ़ता आ गई। उसे याद आया कि कभी उसका भाई नीरज उसे शहर तक छोड़ने आता था, लेकिन अब हालात बदल चुके थे। अब अमन बड़ा हो चुका था। अब वह न सिर्फ शहर, बल्कि पूरी दुनिया अकेले घूम सकता था। नीरज दूसरे शहर जॉब पर था।

अगली सुबह, दादा-दादी का आशीर्वाद लेकर, अमन ने जेएनवीयू लॉ कॉलेज जोधपुर की राह पकड़ी। गाँव के बस-स्टैंड पर जब वह बस में चढ़ा तो उसे लगा जैसे यह बस केवल उसे शहर नहीं ले जा रही, बल्कि उसे उसकी नियति, उसके संघर्ष और उसके सपनों की ओर ले जा रही है। बस के हर झटके के साथ अमन के भीतर एक नई लहर उठती थी गाँव की गलियों, खेतों और तालाबों से दूर जाती बस की खिड़की से बाहर झाँकते हुए अमन को लगा जैसे पूरा समाज उसके पीछे खड़ा है उसकी माँ की प्रार्थना, दादा-दादी का आशीर्वाद, और समाज की उम्मीदें सब उसके कंधों पर हैं।

2.

कॉलेज में रीना और अमन का एडमिशन हो चुका था। लॉ कॉलेज में दाखिला पाने के बाद दोनों ने अपने अपने परिवार वालों को फोन पर सूचित किया। हमारा एडमिशन हो चुका हैं।

अमन ने दादी से कहां—

"दादी माँ मेरा एडमिशन हो चुका है। आप चिंता न करे मै यहां राजीखुशी हूँ, खाने पीने रहने का बंदोबस्त हो चुका हैं, तुम निश्चित रहो।"

रीना ने अपनी मम्मा को कॉल कर कहा—

"मेरा लॉ कॉलेज में दाखिला सफलतापूर्वक हो चुका हैं इसमें कोई संदेह नहीं। मै कॉलेज से फ्री होते ही चली आऊंगी।"

अमन और रीना बहुत अच्छे दोस्त हैं। फर्क बस इतना है कि कहने को धर्म एक हैं पर अचल में जाति अलग अलग भागों में बंटी हुई हैं। घर वालों को एक दूसरे के साथ चलता बैठना ठीक नहीं लग रहा था ख़ासकर रीना के परिवार वालों को कतहीं मंजूर नहीं है। रीना का घर इसी शहर में है तो अमन का शहर से गांव कोसों दूरी पर था।

अगली सुबह करीबन आठ बज चुके थे अमन अपने कमरे पर नाश्ता बना रहा था, तभी अमन का फोन बजा। देखा कि कॉल रीना का था।

"हेलो रीना!"

" मिस्टर! कॉलेज कब चलना है?"

"मैडम! तुम्हारी आज्ञा, जब कहे तब चले।

"तुम भी ना मिस्टर! दिनों दिन शरारती किस्म के बनते जा रहो हो।"

"रुको! दस बजे चलते हैं कॉलेज वैसे ज्यादा दूर नहीं हैं एक किलोमीटर ही तो होगा। आराम से निकल जाएंगे।"

"ठीक है तब तक आराम से नाश्ता कर लो फिर साथ चलते हैं।"

कॉलेज में दाखिला होने का बाद का पहला दिन था। आज का दिन विशेष दिन के रूप में जाना जाएगा। कॉलेज में पहुंचने के बाद दोनों से चारों और नजरें दौड़ाई, कही अजनबी चेहरे नजरों से टकरा रहे थे। नए माहौल की हलचल, छात्रों की चहल पहल, हाथों में किताबें और किताबें भरे बैंग के साथ अगल अलग समूह में बाते करते छात्र एक अलग ही रोमांचित कर रहा थे। तभी अमन ने गौर किया कि सामने बेंच पर बैठा एक लड़का रीना को बार बार टकटकी लगाए देख रहा था। उनकी आंखों में ऐसा भाव था कि जो इशारों इशारों में बाते करना चाहता हो। अमन ने रीना का बताया वो लड़का कब का तुम्हे गुर रहा है। पहले तो रीना ने नजरअंदाज किया खैर छोड़ो जाने दो, लेकिन जब उनकी हरकते बढ़ने लगी तो रीना ने सीधा पलटकर तीखे स्वर में जवाब दिया।

"ऐसे क्यों घूर रहे हो आज तक किसी लड़की को देखा नहीं क्या?"

"क्या ही बोलूं मैडम तुम जो हो इतनी खूबसूरत, कौन तुम्हे देखना नहीं चाहेगा।"

रीना ने गुस्से भरे शब्दों में कहां—

"मतलब क्या है तुम्हारा? खूबसूरती तुम्हारे जैसे निकम्मों, नालायक लड़कों के घूरने को बनाई है, घर में तुम्हारी मां बहिन नहीं हैं क्या? जा पूछ अपनी मां बहिन से की किसी लड़की को गलत इरादों से गुरना कैसा लगता हैं। अगर दुबारा मेरी तरफ ऐसी नजर उठाई तो मेरे हाथों की ताकत तुम्हारे गालों पर इस कदर पड़ेगी कि तुम दिन में भी तारों की गिनती करते फ़िरोगे।"

रीना के शब्द बिजली की तरह गिर रहे थे। कॉलेज परिसर में सन्नाटा पसर गया। सभी छात्रों की नज़रें उसी दृश्य पर थी फिर धीरे-धीरे कानाफूसी शुरू हो गई। वहां खड़े छात्र छात्राएं तारीफों के पुल बांध रहते थे। तारीफ करते नहीं थक रहे थे। 'कमाल की लड़की है इसकी हिम्मत तो देखो।' जो लड़के लड़कियां वकील बनने का सपना ले आए थे उनके व्यवहार और सोच में कही न कही वकालत की झलक नजर आ रही थी। क्लास शुरू हुई तो परिचय का दौर चला। हर छात्र-छात्रा ने अपना नाम, घर और पृष्ठभूमि बताई। अमन ने भी अपना परिचय दिया। शुरुआत में सब सामान्य लग रहा था पर धीरे-धीरे माहौल बदलने लगा। कुछ छात्रों ने जाना कि अमन दलित समुदाय से आता है, तो उनके मन में एक अनदेखा भेदभाव जाग उठा। बाहरी तौर पर तो वे मुस्कान और साथ का व्यवहार करते, परंतु भीतर ही भीतर उनके दिलों में घृणा का बीज बोया जा चुका था। अमन को महसूस हुआ कि उनके व्यवहार में अजीब-सा अंतर आ गया है जैसे कोई पालतू जानवर पास बैठा हो जिसे पास तो रखा जाता है, मगर दिल से कभी अपनाया नहीं जाता। यह अमन के लिए नया नहीं था, मगर यहाँ, इस लॉ यूनिवर्सिटी में, जहाँ कानून और बराबरी की बातें पढ़ाई जाती थीं, वहाँ भी यही भेदभाव देख कर उसका मन भीतर से टूटने लगा।

इसी बीच दो महत्वपूर्ण प्रोफेसरों का परिचय हुआ।

प्रोफेसर डॉ. भावना यादव— ईमानदार, प्रभावशाली और नेकदिल शिक्षिका। वे हमेशा संविधान की अच्छाइयों को गिनातीं और छात्रों को समझातीं कि ' संविधान केवल किताब नहीं, बल्कि समाज को जोड़ने की आत्मा है।'

प्रोफेसर डॉ. बी. आर. पंचाल— कठोर लेकिन विद्वान शिक्षक। वे कानून को गहराई से पढ़ाते और छात्रों से अनुशासन की उम्मीद रखते। उनकी कक्षा में कोई लापरवाही बर्दाश्त नहीं होती। वे बार-

बार कहते, "कानून वही समझ सकता है जो समाज की धड़कनों को समझे।"

अमन और रीना दोनों ही इन दोनों शिक्षकों से प्रभावित थे। रीना को प्रोफेसर भावना की बातें अपनी आत्मा से जुड़ी लगतीं, जबकि अमन को प्रोफेसर पंचाल की कठोरता में न्याय की सच्चाई दिखाई देती थी।

3.

कक्षा में हलचल थी। सभी युवा छात्र-छात्राएँ अपने-अपने स्टूल से खड़े हुए, उत्सुकता और सम्मान के भाव से इंतजार कर रहे थे। तभी प्रोफेसर डॉ. भावना यादव कक्षा में प्रवेश हुईं। उनका आत्मविश्वास और गरिमा कक्षा को तुरंत आकर्षित कर लिया। छात्र-छात्राओं ने दिल से उनका स्वागत किया।

भावना मैम ने मुस्कान के साथ कहा—

"आज हम संविधान की अच्छाइयों के बारे में बात करेंगे। बाबा साहब भीम राव आंबेडकर ने हमें बहुत कुछ दिया है। और सच पूछो तो, बुरे लोग कभी समझेंगे या नहीं, यह समय ही बताएगा। पर जो ताकत उन्होंने हमें दी, उसकी वजह से आज भारत का दलित युवा मंत्री, प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति, या उपराष्ट्रपति तक बन सकता है। यह हमारे संविधान की शक्ति है। अगर संविधान न होता, तो आप सब आज कुछ भी नहीं होते।

आज मैं संविधान के उन अनुच्छेदों की चर्चा करूंगी, जिन्हें जानना हर आम आदमी के लिए आवश्यक है। ताकि आप अपने अधिकारों के लिए लड़ सकें और यह बता सकें कि देश संविधान से चलता है। पत्थर में प्राण डालने वालों से नहीं।"

कक्षा में गंभीरता छा गई। छात्र-छात्राएँ अपनी कॉपियों में ध्यान से नोट करने लगे। अमन और रीना भी हर शब्द को समझने की कोशिश कर रहे थे।

"आज हम मूल अधिकारों पर चर्चा करेंगे," मैम ने आगे कहा।

"आर्टिकल 14—समानता का अधिकार। यह कहता है कि भारत में रहने वाले सभी नागरिकों के लिए कानून सबके लिए बराबर है। कोई बड़ा और कोई छोटा नहीं। यदि कोई बड़ा व्यक्ति अपराध करता है, तो उसे वही सजा मिलेगी जो छोटे व्यक्ति को मिलती है। संविधान आने से पहले ऐसा न्याय संभव नहीं था।"

भावना मैडम ने उत्सुकता से और कहा—

"आर्टिकल 15—राज्य किसी भी नागरिक के साथ धर्म, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर भेदभाव नहीं करेगा। आप सभी को मंदिर, सार्वजनिक स्थान, स्कूल आदि में समान अधिकार प्राप्त हैं।

कोई यह कहकर आपको अपमानित नहीं कर सकता कि आप दलित हैं या किसी अन्य वर्ग से हैं।"

भावना मैम ने मुस्कुराते हुए आगे बढ़ाया,

"आर्टिकल 16—समान अवसर। चाहे आप महिला हों या पुरुष, सरकारी नौकरी, खेलकूद या प्रतियोगिताओं में समान अधिकार प्राप्त हैं।

आर्टिकल 19—वाक एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता। भारत का हर नागरिक दलित, महिला या पुरुष शांतिपूर्वक बोलने, सम्मेलन करने और कहीं बसने का अधिकार रखता है।

आर्टिकल 21—जीवन और स्वतंत्रता का अधिकार। हर व्यक्ति को जीवन जीने, शिक्षा पाने और समाज में घूमने का अधिकार है। सच बोलने और अपने विचार रखने का अधिकार मिलता है, लेकिन झूठे चमत्कार, तंत्र-मंत्र या अंधविश्वास के खिलाफ बोलने का भी अधिकार संविधान हमें देता है। परंतु कुछ अपवाद भी हैं।"

मैम ने ध्यानाकर्षित करते हुए कहा,

"विशेष रूप से दलितों और महिलाओं को संविधान द्वारा अतिरिक्त अवसर और सुरक्षा प्रदान की गई है। यह केवल अधिकार नहीं, बल्कि हमारी रक्षा और स्वतंत्रता की गारंटी है।"

4.

अगले दिन......

कक्षा में प्रवेश करते ही वातावरण बदल गया। दरवाज़ा खुला और भीतर आए डॉ. बी. आर. पंचाल। उनका चेहरा मानो पूरे कमरे में उजाला भर गया हो।

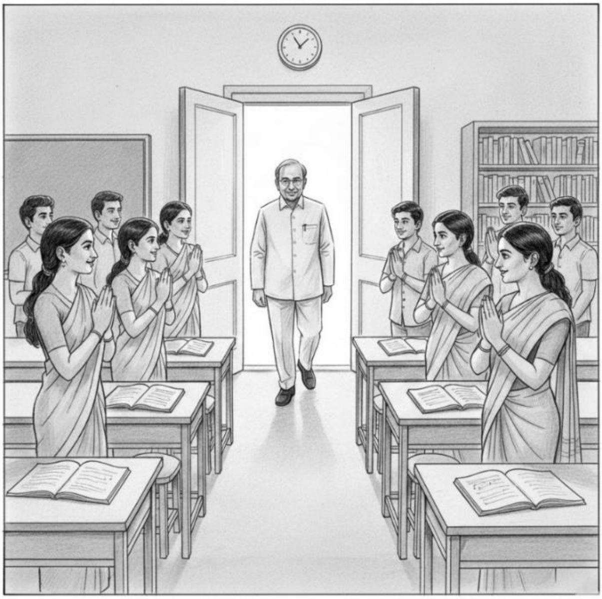

उनके आते ही सभी छात्र-छात्राएं आदर से खड़े हो गए। सर के चेहरे पर हल्की-सी मुस्कान थी, और उस मुस्कान को देखकर हर विद्यार्थी के चेहरे पर आत्मीयता और विश्वास की लहर दौड़ गई।

"बैठ जाइए," सर ने मधुर स्वर में कहा।

सभी छात्र अपनी जगह पर बैठ गए, लेकिन उनके मन में उत्सुकता थी। आज सर क्या पढ़ाने वाले हैं?

कुछ क्षण रुककर बी. आर. सर ने गहरी आवाज़ में कक्षा की शुरुआत की— "बच्चो, आज हम एक ऐसे अधिकार के बारे में चर्चा करेंगे जो हमारे जीवन का मूल आधार है स्वयं की सुरक्षा का अधिकार। संविधान ने हर व्यक्ति को यह शक्ति दी है कि वह अपनी सुरक्षा के लिए आवश्यक कदम उठा सके। हर इंसान को अपनी

जान की रक्षा करने, अपनी संपत्ति की रक्षा करने और अपनी गरिमा की रक्षा करने का समान अधिकार है।"

कक्षा में सन्नाटा छा गया। सभी छात्र गहरी तल्लीनता से सर की बातें सुन रहे थे।

सर आगे बोले—

"यही नहीं, कानून ने हमें केवल निजी जीवन तक ही सीमित अधिकार नहीं दिए हैं, बल्कि यह सुनिश्चित किया है कि हम सभी को सार्वजनिक स्थानों पर भी बराबरी से जीने का हक मिले। चाहे स्कूल हों, कुएं हों, अस्पताल हों, होटल हों या कोई और सार्वजनिक स्थल— हर नागरिक को वहाँ आने-जाने, खाने-पीने और सम्मानपूर्वक उपयोग करने का विशेष अधिकार प्राप्त है। कोई भी व्यक्ति आपको इन अधिकारों से वंचित नहीं कर सकता।"

उनकी आवाज़ में दृढ़ता और आत्मीयता थी। ऐसा लग रहा था मानो वे केवल कानून नहीं समझा रहे हों, बल्कि छात्रों के मन में आत्मसम्मान और अधिकारों के प्रति सजगता का बीज बो रहे हों।

अमन और रीना ने एक-दूसरे की ओर देखा। दोनों के मन में एक ही विचार बार बार आ रहा था— यही तो असली शिक्षा है, जो हमें केवल किताबों से नहीं बल्कि जीवन जीने की दिशा से जोड़ती है।

कक्षा का हर कोना अब केवल ज्ञान का नहीं, बल्कि जागरूकता और आत्मबल का प्रतीक बन गया था।

बी. आर. सर ने फिर छात्रों का ध्यान इतिहास की ओर मोड़ा—

"देखो बच्चो, संविधान बनने से पहले समाज में बहुत असमानताएं थीं। महिलाओं को पढ़ने का कोई अधिकार नहीं था। अंग्रेजों ने सभी वर्णों को औपचारिक रूप से समान दर्जा दिया, लेकिन व्यवहार में असमानता छिपी रही। खासकर दलित महिलाओं के लिए कोई सुरक्षा या कानून नहीं बना था।

ज्योतिबा फुले ने सन् 1848 में पुणे के महाराष्ट्र में अपने मित्र की हवेली में महिलाओं के लिए एक स्कूल खोला। उस स्कूल की महिला शिक्षिका सावित्रीबाई फुले थीं, जिन्हें बाद में शिक्षा की देवी कहा गया। उस समय स्त्रियों का पढ़ाना पाप माना जाता था। जब सावित्रीबाई स्कूल पढ़ाने जातीं, तो उन पर गोबर फेंका जाता था। कानून उस समय दलितों और पिछड़े वर्गों की सुरक्षा के लिए नहीं बना था। लेकिन आज, संविधान ने हमें हक और अधिकार दिए हैं। हमारे लिए विशेष कानून बने हैं, ताकि कोई भी व्यक्ति चाहे वह महिला हो या दलित, पिछड़ा वर्ग हो सुरक्षित और सम्मानपूर्वक जीवन जी सके।"

कक्षा में फिर से सन्नाटा छा गया। छात्रों के मन में गर्व और प्रेरणा के भाव उत्पन हो रहे थे।

5.

समय तेज़ी से बीतता गया। महीनों तक कॉलेज का दौर उतार-चढ़ाव से भरा रहा। कभी अच्छे दिन आते जब हंसी-खुशी में वक्त गुजरता, तो कभी कठिनाई और तनाव के पल भी सामने आते। जैसा कि हर छात्र के जीवन में होता है। अमन, जो गाँव से आया था, अकसर आर्थिक तंगी से जूझता। फीस, किताबें, और रोज़मर्रा की ज़रूरतें उसके लिए बोझ जैसी थीं। ऐसे में रीना हमेशा उसके साथ खड़ी रहती। रीना का बड़ा भाई मुंबई में एक बड़ा बिज़नेसमैन था, और रीना के पास आर्थिक कमी कभी नहीं रही। लेकिन रीना अमन की मदद केवल पैसों तक सीमित नहीं रखती, बल्कि उसके आत्मसम्मान को बनाए रखते हुए उसकी हर समस्या का हल निकालने को तैयार रहती। उस शाम भी कुछ ऐसा ही हुआ। रीना ने कॉल किया और दोनों अपने-अपने कमरों से निकलकर शहर की

उस झील के किनारे मिलने पहुँचे, जहाँ वे कई बार पहले भी लंबी बातें कर चुके थे।

अमन हमेशा की तरह समय पर पहुँच गया और कैफ़े के बाहर एक कुर्सी पर बैठा उसका इंतज़ार करने लगा। थोड़ी ही देर में रीना दूर से आती दिखाई दी। वह इधर-उधर झांक रही थी, शायद अमन को घाट की ओर तलाश रही थी। तभी उसकी नज़र अमन पर पड़ी और उसने मुस्कुराते हुए कहा—

"मिस्टर, तुम यहाँ बैठे हो! मैं तो उधर घाट पर ढूँढ रही थी, लगा तुम अभी तक आए ही नहीं।"

अमन हँस पड़ा—"लो, मैं तो कब से यहाँ हूँ। अच्छा हुआ, तुम आ गईं।"

दोनों झील किनारे आकर बेंच पर बैठ गए। शाम का मौसम सुहावना था, हवा में हल्की ठंडक थी और पानी की लहरें चाँदनी को जैसे आईने में उतार रही थीं। बातचीत शुरू हुई तो वक्त का पता ही न चला।

लेकिन आज रीना का चेहरा सामान्य नहीं था। उसकी आँखें बार-बार नम हो रही थीं। अमन ने ध्यान दिया और चिंतित होकर पूछा—

"क्या हुआ रीना? आज तुम इतनी चुप क्यों हो? कुछ परेशानी है?"

रीना ने पहले तो कोई जवाब नहीं दिया। उसकी आँखों से आँसू टपकते रहे। फिर लंबी चुप्पी के बाद धीमे स्वर में बोली—

"अमन, हमारे घर रिश्ता वाले आए थे।"

अमन का दिल एकदम धड़क उठा। उसकी आँखें रीना की आँखों से मिलीं, और पलभर में जैसे सब कुछ रुक गया।

रीना बोली—

"मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा। मम्मी चाहती हैं कि मैं शादी के लिए हाँ कर दूँ। अमन, तुम ही बताओ मैं क्या करूँ?"

अमन भी गहरी सोच में डूब गया। उसकी आँखों में उदासी और डर दोनों थे। वह जानता था कि रीना उसके दिल के बेहद करीब है, लेकिन समाज और परिवार की दीवारें कितनी ऊँची हैं, यह भी वह समझता था।

थोड़ी देर चुप रहने के बाद उसने रीना को ढाढ़स दिलाते हुए कहा।

"देख रीना, रोने-धोने से कुछ नहीं होगा। एक काम कर सीधे अपनी मम्मा से जाकर कह दो कि तुम शादी नहीं करना चाहती। अगर वे समझ जाएँ तो ठीक है। और अगर नहीं मानें तो मुझे बताना। मैं तुम्हारे लिए कुछ करने की कोशिश करूंगा।

घर लौटने के बाद रीना ने अपने कमरे में साँस गहरी लेकर अपनी मम्मा से कहा—

"मम्मा, मैं स्पष्ट मना कर रही हूँ। मुझे कोई और पसंद है। मैं उनसे शादी करना चाहती हूँ।"

मम्मा ने शांत लेकिन गंभीर स्वर में पूछा—

"उसका क्या नाम है, रीना?"

"अम्मा! अमन नाम है। अमन प्रीत सिंह।"

"क्या करता है?"

"वो मेरे साथ पढ़ता है।"

रीना के मन में डर था। वह जानती थी कि उसकी मम्मा शायद इस रिश्ते के लिए तैयार नहीं होंगी, क्योंकि अमन दलित समाज से था। फिर भी उसने हिम्मत जुटाई। कभी सवालों का सामना कर रही थी, कभी अपने जवाब खुद तलाश रही थी।

मम्मा ने ठंडी आवाज़ में पूछा—

"छोरे की जात क्या है?"

रीना की ज़बान अटक गई। कुछ क्षण वह चुप रही, मन में हलचल थी, लेकिन अंततः उसने साहस कर जवाब दिया—

"माँ, वह दलित समाज से है।"

मम्मा का चेहरा अचानक बदल गया। उसकी आँखों में क्रोध साफ दिखाई दे रहा था।

"क्या! कहां? दलित? तेरी सिर ठीक है न?"

"हाँ, मम्मा। दलित है वो।"

"नालायक! तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई, दलित छोरे से प्यार करने की? तुम्हें शर्म नहीं आई? आज तुम्हारा बाप जिंदा होता तो यही जमीन में गाड़ देता। निकल जा इस घर से! तुम्हारे लिए यहाँ कोई जगह नहीं।"

रीना ने धीरे-धीरे, पर मजबूती से कहा—

"मम्मा, ऐसा मत करें। दलित है तो क्या हुआ, वह भी तो इंसान है। जात एक षड्यंत्र है। जातिवाद एक सामाजिक षड्यंत्र की तरह काम करता है। मम्मा!"

मम्मा का स्वर और कठोर हो गया—

"हठ! सामने से तू मेरा मुंह दिखाने लायक नहीं है।"

उसके बाद रीना कुछ नहीं समझ पा रही थी। उसके मन में बैचैनी छा गई। वह रातभर जागती रही, सोचती रही कि क्या करूं। उसके परिवार की मम्मा के रवैये ने उसे भीतर तक हिला दिया था। अगले दिन रीना कॉलेज नहीं गई। अमन बार-बार कॉल करता रहा, लेकिन संपर्क नहीं हो पाया। शाम के समय आखिरकार रीना का कॉल आया। अमन ने देखते ही फोन उठाया—

"रीना, क्या हुआ? तबियत कैसी है? ठीक तो हो न?"

रीना की आवाज़ में हल्की थकान और उदासी थी—

"अमन, मैं बाहर टहलने आई हूँ। तुम कहां हो? जल्दी उस पार्क के पास आओ, मैं वहाँ सड़क के किनारे खड़ी हूँ।"

"हां, रीना, आ रहा हूँ। तुम निश्चित रहो।"

सूरज ढल चुका था, लेकिन चाँद अपनी परछाई लिए गगन में उभर चुका था। पतझड़ का मौसम था और फुटपाथ पर साथ-साथ चलते हुए सूखी पत्तियों की सरसराहट कानों में कुछ अनसुना सा संगीत बजा रही थी। मंद मंद पुरवाई पेड़ों को झकझोर रही थी। हेलोजन लाइटें पेड़ों के बीच से निकलती हुई छाया को आगे-पीछे झुका रही थीं।

रीना उदास थी, पर अमन हर पल उसे सांत्वना देता रहा। दोनों की आँखों में आँसू थे, लेकिन उनकी मौजूदगी ही एक दूसरे के लिए राहत बन गई थी।

अमन ने धीरे से कहा—

"रीना! मेरे दादी माँ का कॉल आया था। उन्होंने रिश्ता देखा है मेरे लिए। मुझे समझ नहीं आ रहा कि आखिर हो क्या रहा है।"

रीना ने शांत स्वर में कहा— "कोई बात नहीं, अमन। तुम्हारी जो इच्छा। हमारा दुश्मन कोई नहीं है, बल्कि यह जाति है। यह एक षड्यंत्र है। जाति है कि जाती ही नहीं।"

अमन ने गहरी साँस ली—

"रीना, मैं हर पल, हर ख्याल और हर ख़्वाब में तुम्हारे साथ रहूंगा। जिन्होंने हमें जन्म दिया, पाला-पोसा और हमारी हर ख्वाहिश को पूरा किया, उनके खिलाफ जाकर हमें शादी करना ठीक नहीं होगा। हम एक-दूसरे का दुःख समझते हैं, मगर माँ-बाप को दुःखी कर साथ रहना नाइंसाफी होगी।"

रीना ने हल्का सिर हिलाया—

"कैसी बातें कर रहे हो, अमन?"

अमन ने दृढ़ता से कहा—

"हां! रीना, मैं ठीक कह रहा हूँ। जीवन भर साथ रहना अच्छा है, मगर माँ-बाप के खिलाफ जाकर उन्हें दुःखी करके साथ रहना गलत है।"

दोनों ने एक-दूसरे की आँखों में देखा। उनके दिलों में समझदारी और प्रेम का संगम हुआ। जीवन भर का साथ अब खामोशी भरी निगाहों में उलझ चुका था, लेकिन दोनों ने यह महसूस किया कि प्यार केवल पास होने का नाम नहीं, समझने और सही निर्णय लेने का भी नाम है।

वे एक-दूसरे को समझ चुके थे। माँ-बाप के खिलाफ भी तो जा सकते थे, पर उन्होंने ऐसा नहीं किया। इस जगत में माँ-बाप से बढ़कर कोई नहीं। कॉलेज के अंतिम साल में, अंतिम दिन आते-आते, उन्होंने कॉलेज से विदा लेते हुए उन्होंने जीवनभर साथ निभाने का जो वादा किया था, उसे शहर की झील के किनारे ऐसे मुक्त कर दिया मानो किसी पिंजरे के बंदिश पक्षी को आज़ादी दे दी हो।"

भाग 5.

1.

समय अपनी रफ़्तार से आगे बढ़ रहा था। कला संकाय से स्नातक और फिर विश्वविद्यालय से विधि की पढ़ाई पूरी करने के बाद अमन के जीवन में जैसे एक नया मोड़ आ चुका था। दिनचर्या बदल चुकी थी—कभी किताबों में डूबे रहने वाला अमन अब घर की ज़िम्मेदारियों, छोटे-मोटे कामों और कोर्ट के प्रैक्टिस में उलझा हुआ रहता। उसी दौरान, एक दिन रीना ने अचानक उसे कॉल किया। फोन साइलेंट पर था और अमन घर के कामकाज में व्यस्त था। कॉल की घंटी लगातार बजती रही, पर अमन को आभास तक न हुआ। दूसरी बार फिर रिंग बजी, इस बार भी कोई प्रतिक्रिया नहीं। पर जब तीसरी बार मोबाइल पर कंपन हुआ तो अमन का ध्यान उधर गया। स्क्रीन पर रीना का नाम देखकर उसका चेहरा खिल उठा। लंबे समय बाद यह आवाज़ सुनने का अवसर मिल रहा था। उसके चेहरे पर मुस्कान दौड़ पड़ी। जैसे किसी सूखे पत्ते पर ओस की बूँदें गिर जाएँ। उसने तुरंत कॉल रिसीव किया।

"नमस्ते रीना।" उसकी आवाज़ में अपनापन और उत्साह झलक रहा था।

"नमस्ते मिस्टर! क्या हाल हैं?"

"बस राज़ी-खुशी, तुम बताओ।"

"मुझे तुमसे मिलने की तमन्ना है। कब आओगे शहर?" रीना ने धीमी पर स्पष्ट आवाज़ में कहा।

"जब तुम्हारी इच्छा हो।"

"दो दिन बाद मिलते हैं झील के किनारे।" रीना ने कहां।

"ठीक है रीना।"

दो दिन कैसे बीते, दोनों को अहसास तक न हुआ। इंतज़ार जैसे आँखों से नींद और दिल से चैन छीन लेता है। अमन उस दिन जोधपुर शहर की ओर निकल पड़ा। रास्ता लंबा था, गाँव और शहर के बीच की दूरी जैसे उसकी बेताबी को और बढ़ा रही थी। बस की खिड़की से आती ठंडी हवा और शहर की ओर जाती चौड़ी सड़कें उसे बस एक ही मंज़िल की ओर खींच रही थीं। कई घंटों बाद, वह जोधपुर की झील के किनारे पहुँचा। झील के आसपास का नज़ारा बेहद दिलकश था। लोग अपने-अपने साथी—प्रेमी, प्रेमिकाएँ, परिवार और मित्रों के साथ वहाँ टहल रहे थे। झील का शांत पानी डूबते सूरज की सुनहरी किरणों से चमक रहा था, मानो सोने की परत बिछी हो। हवा में शाम की ठंडक घुल चुकी थी और पक्षियों का लौटता झुंड आकाश में सुंदर आकृति बना रहा था।

अमन झील किनारे बने एक कैफ़े के बाहर बैठकर बेसब्री से इंतज़ार करने लगा। हर आती जाती परछाई में उसे रीना का चेहरा नज़र आता। कुछ देर बाद, दूर से एक परिचित आकृति उसकी ओर बढ़ती दिखाई दी। वह रीना थी। चेहरे पर हल्की मुस्कान, आँखों में चमक और चाल में आत्मविश्वास।

अमन की धड़कन तेज़ हो गई। दोनों पास आए और बिना कुछ कहे गले मिल गए। उस क्षण मानो समय थम गया हो। फिर दोनों ने झील की ओर देखा। सूरज अब पानी में उतर रहा था, उसकी परछाई झील में डूबते हुए किसी अधूरे गीत की तरह लग रही थी।

"रीना! मैंने तो सोचा तुम मुझे भूल गई होंगी।"

"कौन, मैं? कभी नहीं अमन।"

"तुम्हारी बहुत याद आती है, रीना।"

रीना हँस पड़ी, पर उसकी हँसी में गहराई थी। "मिस्टर अमन, मुझे क्या तुम्हारी याद नहीं आती? बताइए, कैसे हैं?"

"अच्छा हूँ रीना। तुम सुनाओ।"

रीना कुछ पल चुप रही। फिर धीमी आवाज़ में बोली, "क्या ख्याल है शादी को लेकर तुम्हारा?"

अमन चौंक गया। "कौन, मैं? शादी?"

"हाँ, हाँ, मिस्टर! तुम्हीं से पूछ रही हूँ। तुम्हारी माँ ने कहीं रिश्ता तो नहीं देखा?"

अमन कुछ पल के लिए ठिठक गया। उसकी आँखों में बेचैनी थी। "मैं शादी करूँ पर किससे? जिससे दिल लगा बैठा, वो आज दूर है, समाज से, जाति से।"

"मिस्टर, यूँ उदास मत हो। मैं हूँ न तुम्हारे साथ।"

अमन चौंक पड़ा। "क्या? 'हूँ' का क्या मतलब, रीना?"

रीना की आँखों में आत्मविश्वास चमक रहा था। "मतलब, मिस्टर अमन, मेरे घर वाले मान गए हैं शादी को लेकर।"

अमन का दिल जैसे रुक गया। उसे लगा शायद रीना की शादी किसी और से तय हो गई है।

रीना ने उसकी उलझन को पढ़ लिया। "मिस्टर अमन, तुम्हें पता है, मेरे घर वाले पहले अंतरजातीय रिश्तों के सख्त खिलाफ थे। लेकिन मैंने उन्हें समझाया, अपनी बात रखी, और एक दिन उन्होंने मेरी बात मान ली। उन्होंने मुझे आज़ादी दी, अपना जीवन साथी खुद चुनने की।"

अमन अवाक था। "क्या बात कर रही हो रीना!"

"हाँ, अमन। अब सब कुछ हमारे हाथ में है।"

अमन की आँखों में आँसू छलक आए। "लेकिन मेरा क्या होगा? मैं अपने समाज, अपने घर वालों को क्या कहूँगा? वे कैसे मानेंगे?"

रीना ने उसकी हथेली दबाई और मुस्कराई। "जैसे मैंने अपने घरवालों से कहा, वैसे ही तुम भी कह दो। अगर मैं लड़ सकती हूँ अपनी ख़ुशियों के लिए, तो तुम क्यों नहीं?"

अमन चुप था। रीना की बातें उसके दिल को सुकून भी दे रही थीं और कहीं न कहीं उसके भीतर बवंडर भी मचा रही थीं। मन के भीतर सवालों और मुसीबतों का जंजाल गूँज रहा था। रीना कह रही थी कि उसके घर वाले मान गए हैं, लेकिन अमन जानता था कि असली समस्या घर वालों की सहमति नहीं, बल्कि गाँव और समाज का कठोर फ़ैसला होगा।

उसे पता था, भले ही उसके माता-पिता किसी तरह मान जाएँ, पर गाँव की पंचायत, रिश्तेदार और समाज की नजरें तलवार बनकर लटकेंगी। यही सोचकर उसका मन भारी हो गया। रीना उसकी आँखों में झलकते डर को भाँप गई।

"मिस्टर अमन, किस सोच में डूब गए?" उसने कोमल स्वर में पूछा।

अमन ने झूठी हँसी बिखेरी, "कुछ नहीं रीना बस ऐसे ही सोच में पड़ गया।"

रीना ने उसका हाथ थाम लिया, "चिंता मत करो अमन, सब ठीक होगा।"

"हाँ रीना सब ठीक होगा।"

झील किनारे का वह दृश्य अमन की मनःस्थिति का आईना बन गया। चंद्रमा की परछाई पानी की लहरों में हिलोरें ले रही थी। कभी वह साफ़ नज़र आती, कभी डूब जाती। अमन को लगा जैसे उसकी अपनी ज़िंदगी भी वैसी ही है उलझनों और हलचलों में डूबी हुई। वह लंबे समय तक उस परछाई को देखता रहा, जैसे अंतरात्मा को झकझोरने वाला कोई अदृश्य हाथ उसके सीने को कुरेद रहा हो।

दो दिन बाद

शाम का समय था। गाँव में काली अंधेरी रात उतर चुकी थी। आँगन में बिछी खाटों पर पूरा परिवार बैठा था। ऊपर आसमान में चाँद बादलों के बीच से झाँक रहा था। माहौल में शांति थी, पर उस शांति में एक अजीब सी बेचैनी घुली हुई थी।

आमतौर पर घर में सबसे ज़्यादा बातें करने वाला अमन उस दिन चुप था। उसका चेहरा बुझा-बुझा लग रहा था। दादा जग्गू, दादी गवरी और भाई नीरज एक-दूसरे की ओर देखने लगे। नीरज एक सप्ताह पहले ही शहर से गांव लौटा था। वे सब उसकी हालत भाँप तो रहे थे, लेकिन समझ नहीं पा रहे थे कि आखिर उसके दिल में कौन-सा बोझ है।

आखिरकार दादी गवरी से रहा न गया। उन्होंने धीमे स्वर में पूछा, "अमन बेटा, आज इतना उदास क्यों है? कुछ हुआ है क्या?"

"कुछ नहीं दादी।" अमन ने नज़रें चुराते हुए कहा।

नीरज बोला, "अरे! अगर कुछ हुआ है तो बता भी दे भाई। यूँ छुपाने से क्या फायदा?"

दादा जग्गू भी बोले, "हाँ, बोल अमन! घर में छुपाने जैसा कुछ नहीं होता।"

अमन की साँसें भारी हो गईं। वह हिम्मत जुटा ही नहीं पा रहा था। आखिर कैसे कहे कि उसने एक ऊँची जाति की लड़की से प्यार कर लिया है?

दादी ने उसका हाथ पकड़कर कहा, "बोल दे बेटा। डर मत।"

अमन ने कांपते स्वर में कहा, "दादी... वो... मैं..."

"हाँ-हाँ, बोल बेटा।" दादी ने हौसला दिया।

आखिरकार अमन ने हिम्मत जुटाकर कह दिया, "मैं रीना से प्यार करता हूँ।"

घर में एक क्षण के लिए सन्नाटा छा गया।

"क्या?" दादा जग्गू चौंक पड़े।

"रीना? ये रीना कौन है?"

अमन अब थोड़ा सहज हो चुका था। बोला, "रीना जो मेरे कॉलेज में मेरे साथ पढ़ती थी। मैं उससे प्यार करता हूँ।"

नीरज ने आश्चर्य से कहा, "तो इसमें क्या हुआ? प्यार कर लिया तो कर लिया।"

अमन ने साहस के साथ कहा, "मैं उससे शादी करना चाहता हूँ।"

दादी अचानक चीख पड़ीं, "क्या बक रहा है तू अमन? किस बिरादरी की है वो?"

अमन ने नज़रें झुका लीं, "वो अपर कास्ट से है।"

दादी का चेहरा तमतमा उठा। "अरे, तेरी मति तो नहीं मारी गई है! जानता नहीं इसकी सज़ा क्या हो सकती है? गाँव में रहना मुश्किल हो जाएगा।"

अमन ने गहरी साँस ली, "हाँ दादी, सब जानता हूँ।"

"तो फिर ऐसी बातें क्यों करता है?" दादा गरजे।

अमन की आँखें भीग गईं, "क्योंकि रीना मुझसे बहुत प्यार करती है। और मैं उससे।"

घर में खामोशी छा गई। माँ ने यह सब सुना, तो उनके दिल में भी तूफ़ान उठा। वे जानती थीं कि बेटे का यह रास्ता कठिन है, लेकिन माँ होने के नाते उसका साथ देना उनका फ़र्ज़ था।

दो दिन तक अमन ने ठीक से खाना नहीं खाया। उसका चेहरा पीला पड़ गया। अंततः उसकी दादी और नीरज उसके साथ खड़े हो गए। नीरज ने साफ कहा, "भाई जो करेगा, हम साथ देंगे। जो होगा, देखा जाएगा।"

गाँवों और शहरों में अक्सर ऐसे मामले देखने को मिल जाते हैं,

जहाँ लड़के या लड़कियाँ एक-दूसरे के बारे में ठीक से जानते तक नहीं। यह कि सामने वाला करता क्या है? उसका स्वभाव कैसा है?

बिना किसी जांच-पड़ताल या आपसी समझ के, उन्हें अचानक रिश्ते की खाई में उतार दिया जाता है। अक्सर बच्चों की सहमति के बिना ही उनके विवाह तय कर दिए जाते हैं। दूसरी ओर, जब कोई युवक या युवती हिम्मत जुटाकर अपने माता-पिता से यह कहने की कोशिश करता है कि "मैं उससे प्यार करता हूँ, करती हूं, मेरी शादी उसी से करवा दो," तो यह बात माता-पिता को रास नहीं आती। ऐसी स्थिति में, जब सारे रास्ते बंद हो जाते हैं तब लड़का या लड़की मजबूर होकर भागने जैसा कदम उठा लेते हैं।

कुछ हफ्ते बाद....

दोनों परिवारों की लंबी बातचीत और रीना की जिद्द के बाद, आखिरकार कोर्ट मैरिज का रास्ता निकला। सत्र न्यायालय, रूपावटी में, अमन और रीना ने क़ानून के सामने सात वचनों की तरह अपने रिश्ते को पंजीकृत करवा लिया। अमन वहीं एक अधिवक्ता के रूप में कार्यरत था।

शादी तो हो गई, लेकिन अब असली तूफ़ान उठना बाकी था। गाँव में यह खबर आग की तरह फैल गई—"दलित छोरे ने अपर जाति की लड़की से शादी कर ली!"

यह सुनकर गाँव का दबंग जागीरदार भैरवकांत बौखला उठा। उसकी मूंछें ताव मार रही थीं। उसने गुस्से से कहा, "दलित अब हमारी औरतों से ब्याह करेंगे? ये नीच जाति दिन-ब-दिन बिगड़ते जा रहे हैं। इसे तो मैं देख लूंगा।"

2.

गांव में ठंडक का मौसम था। सुबह की धूप हल्की-हल्की निकल रही थी।

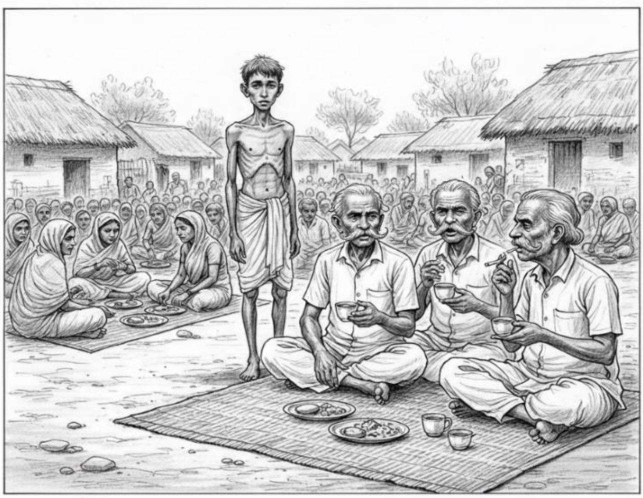

पिछले दिन पड़ोस के गांव के एक बुजुर्ग दलित व्यक्ति का निधन हो गया था। आज तीसरे दिन भोज का आयोजन था। आस-पास के गांवों से दलित समाज के लोग धीरे-धीरे जुटने लगे। उस गरीब मृतक

का इकलौता बेटा, जो मंदबुद्धि और बेहद सरल स्वभाव का था, जैसे-तैसे करके पैसे इधर-उधर से जोड़ पाया और समाज की परंपरा निभाने के लिए भोज का आयोजन कर पाया। बाहर से आए मेहमान टाट पर बैठे हुए थे। रोटियां तोड़, सब्ज़ी चख रहे थे। वहीं समाज के पंच, जो खुद को बड़े कर्ता-धर्ता मानते थे, अलग टाट पर बैठे बीड़ी-सिगरेट फूंक रहे थे। कोई चाय मंगा रहा था, कोई कॉफी। देखने वाले को लगता ही नहीं था कि ये लोग शोक-संतप्त घर में आए हैं। जैसे दुख-दर्द बांटने नहीं, मौज करने आए हों। उनकी मूंछों पर ताव और चाल-ढाल बता रही थी कि उन्हें यहां बस अपनी सत्ता और अपने फैसले दिखाने हैं।

इसी बीच, वही पुराना सिलसिला शुरू हुआ, दूसरे गांव की पंचायती। एक पंच ने मुद्दा उठाया —

"अरे सुना तुमने? कातरगढ़ के जग्गू का पौता बाहर से लुगाई ले आया। समाज की परंपरा तोड़ी उसने। सुना है, प्रेम-विवाह कर लिया है उसने। यह तो समाज के खिलाफ खुला विद्रोह है।"

बाकी पंचों ने बात को हवा दी। कोई बोला —

"ऐसे काम को बढ़ावा नहीं दिया जा सकता। समाज का कायदा सबसे बड़ा है।"

थोड़ी देर में सबने निर्णय ले डाला —

"आज से कातरगढ़ गांव पर ओलम्भा (दंड) दिया जाता है। जब तक वह गांव जुर्माना और भोज नहीं करेगा, तब तक उस गांव के किसी भी व्यक्ति के घर जाने वाले को भी दंड का भागी माना जाएगा।"

भीड़ में फुसफुसाहट मच गई। कई लोग असहज हो उठे। तभी जग्गू और उसके साथी बोल पड़े —

"अरे ये क्या तमाशा है? पिछली बार जब फलाने के घरवाले ने बाहर से लुगाई लाकर शादी की थी तब तुम सब चुप बैठे थे। तब दंड नहीं दिया गया। अब अचानक कातरगढ़ वालों पर कड़ा फैसला क्यों?"

यही मौका था जब भीड़ में से एक बुजुर्ग खड़ा हुआ और जोर से बोला —

"ये कैसा न्याय है? गलती एक ने की, तो दंड पूरे गांव को क्यों? अगर जग्गू के पौते ने प्रेम-विवाह किया है, तो उसकी जिम्मेदारी उसी की है। बाकी गांव वाले किस बात की सजा भुगतें? क्या समाज के कानून इतने कमजोर हैं कि एक आदमी की गलती का बोझ सौ लोगों की पीठ पर लाद दिया जाए?"

कुछ ही क्षणों की खामोशी के बाद नीरज अपनी जगह से खड़ा हुआ। उसकी आवाज़ में गुस्सा भी था और तर्क भी "बताइए पंच साहब, प्रेम विवाह करना जुर्म है क्या? कोई लड़का-लड़की अगर अपनी मर्ज़ी से एक-दूसरे को जीवनसाथी चुनते हैं, तो समाज को क्यों जलन होती है? ये कैसा न्याय है आपका?"

पंच अपनी ऐंठ में बोले —

"समाज में रहना है तो समाज के बनाए नियम-कायदों से रहना होगा। वरना अराजकता फैल जाएगी।"

नीरज हंसा और बोला —

"कायदों की दुहाई तब कहां चली जाती है जब तुम्हारे घरों में यही काम होता है? जब तुम्हारे बेटे-बेटियां अपनी मर्ज़ी से रिश्ते जोड़ते हैं तब समाज के नियम कहां सो जाते हैं? और सुनो अगर प्रेम विवाह गुनाह है तो बिना शादी के घूम रहे पैंतीस - पैंतालीस साल के युवा लोग तुम्हारी आंखों में क्यों नहीं चुभते? उनकी जिम्मेवारी भी तो बनती हैं। क्यों उनके लिए समाज का न्याय अंधा हो जाता है?"

उसकी आवाज़ तेज़ होती गई —

"शर्म करो! अगर समाज का न्याय जात, पैसा और ताकत देखकर तय होगा तो यह न्याय नहीं, विडंबना है। इंसाफ का नाम मत लो जब तुम्हारे तराजू में बराबरी नहीं, बल्कि चालाकी और पक्षपात बैठा हो। और याद रखो, एक व्यक्ति की गलती की सज़ा पूरे गांव को देना सबसे बड़ा अन्याय है।"

"वहाँ बैठे तमाम लोग पंचों की बातें सुन रहे थे। कातरगढ़ को अपना दंड मिल चुका था। वहीं मृतक बुजुर्ग का इकलौता बेटा, अपने ही घर में किसी और के घर पंचायती सुनते हुए, चुपचाप अपने काम में लग गया।"

*****

भाग 6.

1.

गर्मी का मौसम पीछे छूट चुका था। अब राते लंबी और दिन छोटे होने लगे थे। ठंड की दस्तक धीरे-धीरे गांव की हवा में घुल रही थी। कातरगढ़ के बस स्टैंड के एक कोने पर लकड़ी और घास-फूस से बनी एक छोटी-सी चाय की टपरी बनी हुई थी।

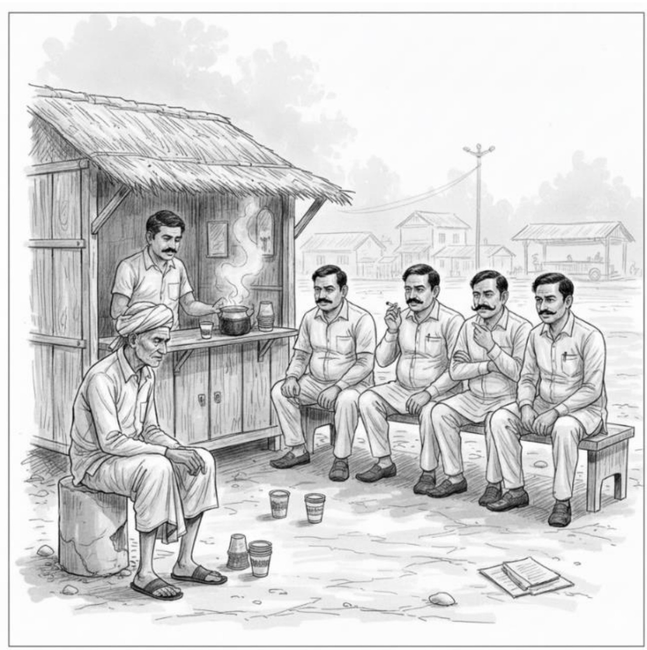

यही वह जगह थी जहाँ गांव के लोग आकर कुछ देर विश्राम करते, चाय की चुस्की लेते और अपनी दिनभर की बातें साझा कर जाते। पर यह टपरी पूरे इलाके में सिर्फ चाय के लिए नहीं जानी जाती थी। यहां आने-जाने वालों पर दबंग युवाओं और जागीरदार भैरवकांत

सिंह की परछाई हमेशा मंडराती रहती थी। उनका खौफ़ ऐसा था कि दूसरे गांवों के लोग इस तरफ रुख करने से कतराते थे।

सुबह का वक्त था। धुंध हल्की चादर-सी बिछा रही थी। जग्गू, अपनी पुरानी धोती, कमीज़ और सिर पर छापा बांधे हुए, स्टेशन के पास बनी उसी चाय की टपरी पर आकर रुके। टपरी की ओर कदम रखते ही उन्होंने धीमे स्वर में सबको संबोधित किया—

"जे माता जी री सा।"

टपरी के बाहर टूटी हुई लाइट के खंभों से बने अस्थायी बेंच पड़े थे। उन पर गांव के दबंग और जागीरदार लोग विराजमान थे। जग्गू उनके पास बैठने में झिझक रहे थे। जिन लोगों ने कभी उन्हें बराबरी का हक नहीं दिया, जिनकी जुबान से बार-बार जातीसूचक अपमान सुनना पड़ा, उनके पास जाकर बैठने की हिम्मत जुटाना आसान नहीं था। आख़िरकार साहस बटोर कर वह पास पड़े एक खाली सीमेंट के खंभे पर जा बैठ गए। उनकी मौजूदगी से वहां बैठे कुछ लोग घृणा से तमतमा उठे। मानो उनकी जगह अपवित्र हो गई हो। कहने को यह टपरी गांव का साझा ठिकाना थी। जहां कोई भी आकर बिना भेदभाव के बैठ सकता था। लेकिन सच्चाई इससे बिल्कुल उलट थी। यहां की हवा जाति की दीवारों से बंधी थी। चाय वाले काका अपने पुराने भगोने में चाय खौलाते हुए उसी परिचित अंदाज़ में उबान ला रहे थे। चाय की खुशबू चारों ओर फैल रही थी, मगर उसमें भी फर्क की गंध घुली थी। ऊँची जाति के लोगों को चीनी के साफ-सुथरे कप थमाए जा रहे थे, जबकि जग्गू के हाथ में प्लास्टिक और कागज़ के मिश्रण से बना एक कप थमा दिया गया।

भेदभाव की रेखाएँ इतनी साफ थीं कि मानो चाय की हर घूंट के साथ दलित और सवर्ण के बीच की दूरी और गहरी हो रही हो। धीरे धीरे समय बीतता चला।

2.

पतझड़ की ऋतु जिसे आम बोलचाल में शरद ऋतु कहां जाता हैं। भोर के लगभग चार बज चुके थे। यह वो समय था जब लोग नींद में डूबे हुए होते है, शहरों व गांवों में कोई अपने सपनों के पीछे दौड़ रहा होता हैं, लेकिन इस गांव के कोने को किसी पुरानी पीड़ा की तरह खामोश कर दिया था। आसमान पर पूर्णमासी का चांद अपने सम्पूर्ण वैभव में चमक रहा था, मानो दलित चेतना की कोई भूली हुई दीपशिखा अमावस से लड़ रही हो। पूर्व दिशा से बहती ठंडी पुरवइया आंगन में गिरे सूखे पत्तों को बिखेर रही थी। दरवाजे की खटर-पटर की आवाज़ से लगता जैसे समय खुद चुपचाप किसी घर की दीवारों पर दस्तक दे रहा था।

आंगन में खड़ा बूढ़ा नीम का पेड़ सालों से वहीं था। जाने कितनी पीढ़ियां उसकी छांव में बीतीं, लेकिन आज तक उसने बिना प्रतिरोध किए, अपनी सूखी पत्तियाँ हवा के हवाले कर दी थीं। कोई चुपचाप झर रहा था। कोई अपनी जड़ों से कट रहा था। कोई इतिहास फिर से दोहराया जा रहा था। यह केवल मौसम नहीं था, यह एक संकेत था परिवर्तन का दलितों के जीवन में चुपचाप आते, गहराते और फिर संघर्ष की जमीन पर उगते नए सवेरे का। अमन को उस रात नींद नहीं आई। उसकी बेचैनी बढ़ गई थी। कल ही उसे यह कड़वा सच पता चला था कि उसकी पुश्तैनी जमीन पर भैरवकांत का कब्ज़ा है। वही जमीन जो दादा–परदादा से चली आ रही थी, आज किसी और की जागीर बन चुकी थी। यही सोचते–सोचते अमन करवटें बदलता रहा और आधी रात को उठकर घर के कोने में रखे पुराने संदूक को खोल बैठा। उस संदूक जिसमें पुरानी पीढ़ियों की यादें कैद थीं। अमन कांपते हाथों से पुराने पीले पड़ चुके कागज़ पलटने लगा। हर पन्ने को ध्यान से देख रहा था। पता ही नहीं चला कि रात कब बीती और पूर्व दिशा में सूरज की लालिमा कब फैल गई।

सुबह होते ही दादी ने उसे संदूक में उलझा देखा तो हैरानी से पूछा–

"क्या कर रहा है बेटा? इस संदूक को क्यों खोला?"

"कुछ नहीं दादी माँ, बस थोड़ी जानकारी ढूंढ रहा था।"

"कौन-सी जानकारी? और किस लिए?"

"दादी! दादा जी ने कल कहां था कि हमारी सौ बीघा जमीन है जिस पर भैरवकांत ने कब्ज़ा कर रखा है। वही कागज़ ढूंढ रहा हूँ।"

"हाँ बेटा, है तो पर तुम्हारा इरादा क्या है?"

"दादी माँ! वो जमीन मैं लेकर रहूँगा।"

इतने में दादा जी भीतर आ गए। उन्होंने बात सुनी और तुरंत टोका "क्या लेकर रहोगे?"

"हमारी जमीन जिस पर भैरवकांत ने कब्ज़ा कर रखा है।"

"बेटा, तुम नहीं जानते वो कैसा आदमी है। भैरवकांत दबंग है। उससे उलझना मौत को न्योता देने जैसा है।"

दादी ने भी समझाने की कोशिश की –

"हाँ बेटा! छोड़ो ये बातें। मान लो जैसे हमारी जमीन कभी थी ही नहीं।"

यह सुनकर अमन का बड़ा भाई नीरज बोल उठा –

"दादी माँ! कैसी बातें कर रही हो? हमारी जमीन पर उन्होंने कब्ज़ा कर लिया और हम चुप बैठे रहें? नहीं अब और नहीं।"

अमन ने कहां –

"भईया सही कह रहे हो। यही तो समय है जिसका हमें इंतज़ार था। दलित होना गुनाह नहीं बल्कि हमारी ताक़त है। अब डरना नहीं है हमे।"

दोनों भाइयों ने घर के आँगन में नीम के पेड़ के नीचे बैठकर निश्चय किया–

"हम अपनी जमीन लेकर रहेंगे।"

जग्गू, एक सीधा-सादा मजदूर किसान हैं। करीब तीस साल पहले, तभी भैरवकांत और उसके पिता रमणकांत ने चालाकी से उनकी जमीन हड़प ली थी। उस समय जग्गू ने बहुत कोशिश की, परन्तु दबंगों के आगे उसकी एक न चली। मजबूरी वंश उन्होंने हार मान ली।

शाम का समय था। घर में सन्नाटा पसरा हुआ था। तभी नीरज ने दादा से कहा –

"दादा जी, अब आप डरिए मत। बस हमारा एक काम कर दीजिए। जागीरदार भैरवकांत के घर जाकर उनसे कह दीजिए कि यह हमारी जमीन है। खुशी-खुशी कुछ हिस्सा रख लें और बाकी हमें लौटा दें। अगर ना माने तो पूरी जमीन से हाथ धो बैठेगा।"

जग्गू का चेहरा डर से पीला पड़ गया। परन्तु पोतों का आत्मविश्वास देखकर वह हिम्मत जुटाने लगा। कांपते कदमों से व भैरवकांत की हवेली की ओर चल पड़ा।

दरवाजे पर पहुँचकर उन्होंने धीरे से दस्तक दी और अंदर जाते ही झुककर बोले –

"जे माता जी री सा"

"ओ जग्गू! कैसे आना हुआ?"

"हुकुम! वो जमीन।"

"कौन-सी जमीन?"

जग्गू ने हिम्मत बटोर कर कहा –

"जिस पर आपने कब्ज़ा कर रखा है, हमें अपना हिस्सा चाहिए।"

"क्या कहा? हिस्सा? अरे नीच जात! तेरी औकात क्या है जो अपने हिस्से की बात करता है?"

जग्गू के मुँह से एक शब्द भी न निकला। वे चुपचाप लौट आए।

"बहुत बढ़िया दादा जी! बस हमें यही चाहिए था। प्रेम से समझ जाता तो ठीक था। अब हम कोर्ट में लड़ाई लड़ेंगे।" अमन ने कहां।

अगले दिन दोनों भाइयों ने तहसील और पटवारी से जमीन की प्रमाणित नक़ल निकलवाई। अमन ने पूरे दस्तावेज़ों की जांच कर वादपत्र तैयार किया फिर राजस्व न्यायालय में दावा दाखिल किया। कोर्ट से नोटिस और समन प्राप्त होने के बाद सुनवाई शुरू हुई। भैरवकांत ने अपने झूठे कागज़ और खरीदे हुए गवाह कटघरे में खड़े किए। मगर न्यायालय के सामने सच ज्यादा देर तक छिपा न रहा। आख़िरकार, राजस्व न्यायालय ने भैरवकांत को कब्ज़ा खाली करने का आदेश दिया।

समय अपनी चाल चलता रहा। धीरे-धीरे मौसम बदले, मगर गांव की मिट्टी में बसे पुराने किस्से और दुश्मनियां वैसे ही ज़िंदा रहीं। एक ऐसा समय भी आया जब भैरवकांत, जिसने कभी गांव के लोगों पर अपना डर और दबदबा बनाए रखा था, धीरे-धीरे उसी समाज के भीतर अकेला पड़ने लगा। उसके अपने लोग, उसका अपना समाज, जो कभी उसकी ताकत थे, अब उससे मुंह मोड़ चुके थे। उनके कारनामे, अन्याय और वर्षों से चल रहे दमन का बोझ इतना भारी हो गया था कि उसका असर उसकी इज्जत पर भी साफ़ दिखने लगा। गांव के चौपाल पर बैठने वाले लोग अब भैरवकांत का नाम सुनते ही खामोश हो जाते। जहां कभी उसकी बात को कानून माना जाता था, वहां अब उसके शब्द बेअसर हो गए थे।

 जो हाथ कभी उसकी ताकत के प्रतीक थे, वही अब इशारा करने लगे "दूर रहो इससे।" दिनों दिन अकेलापन बढ़ता गया। भैरवकांत के घर का चूल्हा ठंडा होने लगा, दरवाज़े पर आने-जाने वालों की चहल-पहल खत्म हो गई। उनके ही लोगों ने उसे समाज से बेदखल कर दिया।

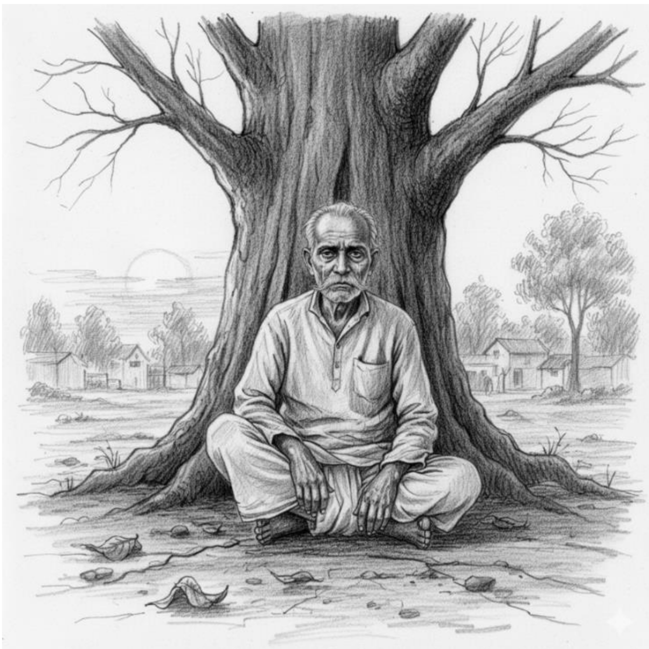

 वह आदमी, जिसने दूसरों की ज़मीन और ताकत के दम पर दूसरों को झुकाया था, आज खुद टूट चुका था। एक दिन, जब सूरज ढलने को था और गांव की पगडंडियों पर हल्की हवा बह रही थी, भैरवकांत गांव के बाहर एक पुराने पेड़ के नीचे आकर बैठा। उसका चेहरा हताशा से झुका हुआ था, आंखें सूनी और आवाज़ गूंगी। वर्षों का दबा दर्द और अकेलापन उसकी सांसों में उतर चुका था। उसने चारों तरफ देखा कोई अपना नहीं, कोई सहारा नहीं। उस पेड़ के नीचे

फंदा डालकर सब कुछ खत्म कर दिया। सुबह जब गांववालों को यह खबर मिली, तो गांव के कोने-कोने में हलचल मच गई। लोग इकट्ठा हुए, कुछ ने राहत की सांस ली, कुछ ने हैरानी से सिर हिलाया। कई लोगों के चेहरों पर अजीब सी खुशी थी मानो वर्षों का एक डर खत्म हो गया हो। लेकिन इस खुशी के बीच भी एक कड़वा सच हवा में तैर रहा था। भले ही भैरवकांत का अंत हो गया, उसकी करतूतों का सिलसिला थम गया, वर्जकांत ने हार मान ली, मगर गांव के लोगों के मन में जातीय भेदभाव, छुआछूत और सामाजिक दीवारें अब भी जिंदा थीं। भैरवकांत का जीवन भले ही समाप्त हो गया, लेकिन उस गांव की सोच अब भी अपनी जगह ठहरी हुई थी। अपने समाज के चापलूस लोग जो हमेशा दूसरों को गिराने की कोशिश में लगे थे उनकी सोच आज भी जिंदा थी। बहुत कुछ बदलकर भी बहुत कुछ अधूरा सा था। समय बदल गया लेकिन घटिया मानसिकता आज भी जिंदा थीं।

****